ए॰ ठ/फ
16.8.75

मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :
परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक :
सेठ दुर्गादासजी

२	अगस्त १९७५	संख्या ४

मालके कुल तीसरे स्थान पर

लेखक :—

सेठ दुर्गा दास साहिब, चण्डीगढ़

गरुड़ ने एक बार विष्णु भगवान से प्रश्न किया महाराज ! मानव का सब से पहला कर्तव्य क्या है ? उत्तर में भगवान ने कहा कि ऐ गरुड़ ! जीव का सब से पहला और उत्तम धर्म अपने देह और प्रान की रक्षा है। यह बिल्कुल सत्य है।

इस संसार में शक्ति का राज्य है। इस लिये जो व्यक्ति इस संसार में जीवित रहना चाहता है, उसके लिए जरूरी और पहली शर्त्त है कि शक्ति की पूजा करे। शक्ति के बिना इस संसार में किसी का गुजारा नहीं। यदि शक्ति है तो जीव इस संसार के सब भोगों का आनन्द ले सकता है। पाचन शक्ति है तो भोजनका आनन्द आवेगा। बल है तो स्त्री से प्रेम का आनन्द ले सकता है। ताकत है तो कारोबार कर सकेगा और धन कमा सकेगा। शक्ति है तो धन

से लाभ उठाया जा सकता है। देश-देशान्तर की सैर के लिए शक्ति की आवश्यकता है। सेहत है तो राग-रंग अच्छे लगते हैं। शक्ति है तो बोलचाल ठीक है। एक रोगी और निर्बल जीव क्या कर सकता है? काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार इन पाँचों वृत्तियों से जीव इस संसार का आनन्द लेता है। लेकिन जिस जीव में बल नहीं है, निर्बल हो चुका है, बुढ़ापा आ चुका है, जीव के ये पाँचों बेकार हो जाते हैं। जीव अपनी हस्ती को महसूस नहीं कर पाता है। इसलिए इस संसार में जीवन गुजारने के लिए प्रवृत्ति मार्ग ही चाहिये। प्रवृत्ति मार्ग में सेहत को कायम रखना जीव का पहला धर्म है। जैसे बलके बिना धन नहीं कमाया जा सकता, उसी प्रकार स्वास्थय के बिना ईश्वर की भक्ति भी नहीं हो सकती। इस संसार में सबसे उत्तम चीज सेहत है। किसी ने अंग्रेजी में ठीक कहा हे :—

Wealth is lost nothing is lost,
Health is lost everything is lost.

यदि धन चला जाय तो समझ लो कि आप नें कुछ नहीं गंवाया। क्योंकि शरीर के स्वास्थ रहने से धन फिर कमाया जा सकता है, यदि स्वास्थ खो गया

तो जीव का सब कुछ खो गया। ईश्वर की भक्ति भी नहीं कर सकता है। क्या कभी किसी बीमार ने कोई कर्म धर्म किया या किसी ज्ञानी ने जब बीमार हो गया अपने ज्ञान के बल से अपने मन को समझाया और हौसला दिया ? नहीं, ऐसा कभी नहीं हुआ। बीमार ने कभी ईश्वर भक्ति की इच्छा नहीं की, वह तो सदा स्वस्थ रहने की इच्छा करेगा। रोग के कष्ट के कारण सदा हाय हाय करेगा। हज़ार यत्न करो उस के मुंह से कभी राम राम न निकलेगा, तन्दरुसती हज़ार नेहमत है। वह विवश है, बीमारी का कष्ट सहन नहीं कर सकता। स्वास्थय का महत्व बीमार से पूछो। इस संसार में सब से अधिक बढ़ाई शक्ति की पूजा है, शक्ति की पूजा का तातपर्य स्वास्थय के नियमों का पालन करना है। अपनी सेहत बनाओ। अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा करो, वीर्य ही शक्ति है। सात्विक और मिति आहार हो। जीने के लिये खाया जाय, न कि खाने के लिये जिया जाय।

कहा जाता है कि इस संसार में सर्व प्रथम पूजनीय अथवा ईश्वर, धन है। यदि धन है या पेट में रोटी है तो ईश्वर की भक्ति हो सकती है। क्या

कभी किसी निर्धन ने ईश्वर भक्ति की ? ईश्वरीय ज्ञान अर्थात निवृत्ति मार्ग भूत और वर्तमान काल में राजाओं, महाराजाओं और धनी लोगों के भाग्य में रहा है। निर्धन तो सदा धन की इच्छा करेगा। भूखा व्यक्ति रोटी रोटी चिल्लायेगा। भला भूखा व्यक्ति इस ससार का क्या आनन्द ले सकता है ? इस संसार के भोगों का आनन्द लेने के लिये यदि सेहत और बल कीं अवश्यकता है तो धन की भी अवश्यकता है। देखिये कबीर साहिब क्या फरमाते हैं।

कबीर क्षुधा कूकरी, करत भजन में भंग।
ताको टुकड़ा डाल कर, भज़न करो निःसंग।

इस संसार का कोई काम धन के बिना नहीं होता। पग-पग पर इसकी अवश्यकता है। संन्यासी जो बन में रह कर जीवन व्यतीत कर रहा है उसके लिये भी जीवन की अवश्यकतायें अनिवार्य हैं। भोजन और वस्त्र चाहिये। गृहस्थी का तो धन के बिना निर्वाह असम्भव है। भूखे को रोटी के महत्व का पता है।

पैसे वाले की सदा बहार है।
बिन पैसे धक्के चार हैं ॥

पैसा ही रंग रूप है. पैसा ही माल है।
पैसा न हो तो आदमी. चरखे की माल है॥

इसलिये इस संसार में जीवन व्यतीत करने के लिये स्वास्थय का पहला स्थान है। दूसरे स्थान पर धन आता है और ईश्वर का स्थान तीसरा है। मुझे काफर मत कहना यह असलियत है। असलियत को भुलाना बड़ी गलती होगी। हर एक वस्तु को ठीक जगह देना इन्सान का धर्म है।

ईश्वर तो उनका इष्ट है जिनके पास सेहत है और धन है और संसार के सब आनन्द और भोग भोगे जा चुके हैं। उपराम हो चुका है, सन्तुष्टि हो चुकी है, मन में वैराग्य है और निवृत्ति मार्ग को अपनाने से आनन्द और खुशी मिलती है। आत्मिक शक्ति से उन्नति मिलती है। फिर सेहत और धन की चिंता नहीं आती। जो महापुरुष आध्यात्मिक अवस्था में रहते हैं और मालिके कुल पर पूरा विश्वास है, उनकी रहनी चोथे पद की है। ऐसे महापुरुषों के लिए मालिके कुल का पहला दर्जा है। वे धन और स्वास्थय की चिंता नहीं करते। इस सम्बन्ध में आपको एक कहानी सुनाता हूं। कहानी

तो कहानी है। हमें तो कहानी के तात्पर्य को जानना है। लिफाफा फेंक दो और मजमून पढ़ लो। एक बार महारानी लक्ष्मी और विष्णु महाराज में विवाद हो गया। लक्ष्मी जी फरमाने लगीं कि यह सारा संसार मेरा पुजारी है और आपको कोई जानता भी नहीं है। विष्णु जी ने कहा कि ऐसा नहीं है। संसार में मेरे भी भक्त हैं। लेकिन, आप स्त्री का हठ जानते ही हैं। वह नहीं मानी। अंत में विष्णु जी ने अपनी बात को सिद्ध करने की ठान ली और मृत्यु लोक में आ गये। एक साधू का भेष बनाया। माथे पर चंदन, बगल में मृगछाला, पाँवों में खड़ाऊं और वैरागिन हाथ में लिये हुए चले जा रहे थे। एक लाला जी ने देखा और सोचा कि कोई महात्मा है। 'नमो नारायण' बुलाई। नत-मस्तक होकर प्रणाम किया और प्रार्थना की कि महात्मा जी पधारिये। मेरे मकान को पवित्र कीजिए। आपको सब प्रकार का आराम मिलेगा। महात्मा जी ने कहा, "देखो, मैं किसी जगह नहीं ठहरता। यदि आसन जमा लेवें तो अपनी इच्छा से आसन उठाता हूं। यदि आपको शर्त्त मंजूर हो तो ठहर जाता हूं।"

लाला जी ने कहा, "मेरे बहुत मकान हैं। कई कोठियाँ हैं। जो आपको पसन्द है, वहाँ ठहरिये। आपको कौन उठाने वाला है।" अंत में महात्मा जी ने एक मकान पसन्द किया और वहाँ पर डेरा जमा दिया। प्रतिदिन प्रातः—शाम सत्संग होने लगा।

एकदिन लक्ष्मी जी भी मृत्यु लोक में खूब सजधज कर आ गयीं। ऐसा मालूम होता था कि आप कोई महारानी हों। लाला जी को पता लगा कि शहर में कोई महारानी आई हैं। उसे मकान किराया पर चाहिये। किराया अच्छा मिल जायेगा। आप महारानी जी को मिले और प्रार्थना की कि शहर में मेरे अनेक मकान हैं। जिस मकान में आपकी इच्छा करे, रहें। किराया उचित होगा। महारानी ने एक मकान पसन्द किया और उसमें ठहर गई।

लाला जी ने अपने नौकर से कह रखा था कि महारानी जी को कोई कष्ट न होने पावे। नौकर सुबह शाम महारानी जी के पास जाता, जो हुकुम मिलता कर देता। महारानी जी सोने चांदी के वर्तनों में भोजन करतीं और नौकर को कहतीं कि

इन वर्तनों को ले जाओ। मैं दूसरी बार इन वर्तनों में भोजन नहीं करती। नौकर बड़ा खुश था। उसको हर रोज हजारों रुपये के मूल्य के वर्तन मिलने लगे और वह महारानी जी की अधिक सेवा करने लगा एक दिन नौकर वर्तन उठाकर ले जा रहा था कि लाला जी आ गये। पूछा कि बात क्या है ? पता लगने पर उसने नौकर को डांट दी और कहने लगा कि लाओ सब वर्तन और मुझे दे दो। तुम्हारा इन वर्तनों पर कोई अधिकार नहीं। आप महारानी की सेवा करनी शुरु करदी। खुद जूठे वर्तन उठाता, साफ करता और अपने घर को ले जाता।

एक दिन महारानी ने कहा कि मुझे यह मकान पसन्द नहीं है। मैं जा रही हूं। तो लाला जी ने बहुत विनती की, हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि मेरे मकान और कोठियां बहुत हैं। जो आपको पसन्द हो, वहां रहिये। मन ही मन प्रार्थना कर रहें थे कि महारानी न जावे। चिंता कर रहे थे कि महारानी जो अगर चली गई तो सोने-चांदी के वर्तन का ढेर हाथ में नहीं आ सकेगा। महारानी जी के आगे पीछे फिरने लगे। महारानी को बहुत मकान दिखाये।

किन्तु कोई पसन्द नहीं आया। अंत में वह मकान पसन्द आया जहां महात्मा जी सत्संग करा रहे थे। महारानी ने कहा कि यह जगह सुन्दर है। यह मुझे दे दो। लाला जी ने कहा कि यह तो साधारण बात है। लाला जी महात्मा जी के पास गये और कहने लगे कि यह मकान खाली कर दीजिए। महात्मा जी ने कहा कि आपने वादा किया था कि मैं अपनी मर्जी से डेरा उठाऊंगा अब आपको यह मकान खाली कराने का कोई अधिकार नहीं है। लाला जी ने कहा कि वह बात छोड़िये। मुझे इस मकान की बहुत जरूरत है। आपकी बड़ी कृपा होगी। यदि आप खाली कर दें तो आपको और मकान दे दूंगा। महात्मा जी ने कहा कि न मैं खाली करूंगा और न ही मुझे दूसरा मकान चाहिये लाला जी ने कहा कि देखिये महात्मा जी ! यदि आप नहीं मानोगे तो पुलिस की सहायता लेनी पड़ेगी। आप जानते ही हैं कि पुलिस मेरी अपनी ही है। झगड़ा बढ़ गया। मैं मैं तू तू तक नौबत पहुंच गई। लोग इक्ट्ठे हो गये। लाला जी बिगड़। गये। महात्मा जी को बुरा-भला कहने लगे। लोभ

ने बुद्धि भ्रष्ट कर दी। लोगों ने पूछा कि वह कौन सा महात्मा है? देखा तो महात्मा लोप हो गये। लाला जी चकित थे। दौड़े दौड़े महारानी जी को लाने गये। देखा तो महारानी जी भी वहां नहीं।

लक्ष्मी ने विष्णु जी से कहा कि देखा संसार का हाल। ये सब मेरे भक्त हैं। तुमको कोई नहीं जानता। विष्णु जी ने कहा कि आओ, मैं अपना भक्त दिखाऊं। विष्णु मृत्यु लोक में आये और कबीर साहेब के पास पहुंचे। एक मजदूर के भेष में थे। बोले कि मैं सूत लाया हूं कपड़ा बुन दीजिये। कबीर साहेब ने जवाब दिया आइये और उनका कपड़ा बुनना शुरू कर दिया। दाम का फैसला हो गया। इतने में लक्ष्मी जी भी पधारीं और कबीर साहेब को कहने लगीं कि यह मेरा सूत है, इसका कपड़ा बना दीजिए। कबीर साहेब मे उत्तर दिया बैठिये अभी काम कर देता हूं। लक्ष्मी जी ने कहा कि पहले मेरे सूत का कपड़ा बुन दीजिए। यह सूत उतार दो। कबीर साहेब ने कहा कि ऐसा नहीं होगा। लक्ष्मी ने बहुत अड़चन डाली लालच दिया। लेकिन,

काम न बना। हार कर लक्ष्मी जी अपना मुंह लेकर वापस चली गईं।

विष्णु जी ने कहा ऐ लक्ष्मी! मेरे भी भक्त संसार में हैं।

इस में कोई शक नहीं है कि संसार लक्ष्मी का पुजारी है। लक्ष्मी के बिना इस संसार में गुजारा नहीं है, सच्चाई भी यही है कि लक्ष्मी की पूजा होनी चाहिए। लक्ष्मी की प्राप्ति के वाद विष्णु जी महाराज के चरनों में ध्यान जायेगा।

पैसे वाले तुझे सदा बहार है?
विन पैसे चरखे की माल है।

अगम लोक

(पहला भाग)

सत्संग हुज़ूर परमदयाल परमसन्त बाबा फकीरचन्द जी महाराज मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

मासिक सत्संग (दिनांक 18 मई 1975)

चढ़ो री सखी अब अगम अटारी, खोल दई मेरे हिये की पटारी।
हाथ लई मैंने बिरह कटारी, काल दुष्ट का सीस क़टारी ॥

राधास्वामी ! मैं छोटी आयु से ही हिन्दु घराने के विचारों और संस्कारों के कारण राम को मिलने निकला था। यह मेरा कर्म भोग कह लो, भगवान की इच्छा कह लो या कुछ भी समझ लो। मैं हुज़ूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरण कमलों में एक दृश्य द्वारा गया था। उन्होंने

मुझे सन्तमत या राधास्वामी मत की शिक्षा दी। इसमें दर्जे हैं, सहस दल कमल चलो, सुन्न महासुन्न चलो, भंवरगुफा चलो, सतलोक चलो और अलख और अगम लोक चलो। बचपन से जो शिक्षा मुझ को सनातन धर्म से मिली थी यह उसके विरुद्ध थी, या यूं समझो की उस समय मुझे समझ नहीं आती थी। इसलिए मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा हो कर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा। पता नहीं जो मैंने समझा है, वह ठीक है या गलत है। हजूर दाता दयाल जी ने आज्ञा दी थी कि फकीर! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए जो मैंने समझा, कहता रहता हूं। मेरा सारा जीवन इस खोज में बीत गया। वह लिखते हैं कि :—

चढ़ो री सखी अब अगम अटारी, खोल दई मेरे हिये की पटारी।
हाथ लई मैंने विरह कटारी, काल दुष्ट का शीश कटारी।

राधास्वामी मत वोले इस वाणी को पढ़कर क्या समझते हैं? यह मुझे पता नहीं, मैंने

राधास्वामी मत को या सन्तमत को समझने में सारा जीवन खो दिया। क्या समझा ! सुनो, आदमी के अन्तर में किसी वस्तु की तलाश की लगन होती है। जैसे मुझे थी और मैं इस खोज में निकला था कि मेरा मालिक कहाँ है ? पहले तो मैं राम को मालिक समझता था, उस में आनन्द लेता था। फिर जब मैं पन्थ में आ गया, तो फिर गुरु स्वरूप को मालिक समझता था और उसमें आनन्द और खुशी लेता था। फिर जब आप सत्संगियों ने मुझे बताया कि मेरा रूप आप लोगों के अन्तर प्रकट होता है, सुरते चढ़ा देता है, दवाईयाँ बता देता है और अन्त समय पर लोगों को ले जाता है और मैं नहीं होता और न हो मुझे कोई पता होता है, तो मझे समझ आ गई कि यह तो सब अपने ही मन और अपने ही विश्वास का खेल है। इस समझ से मैं इस परिणाम पर आया कि मेरे अन्दर में भी यह जो रूप प्रकट होता है, यह भी मेरे अपने ही विश्वास का खेल है और यह असली मालिक नहीं है। तो फिर वह असली मालिक कौन है जिस ने मुझे बनाया ? सात वर्ष की आयु से उस मालिक

की खोज में निकला था। सनातन धर्म के संस्कारों के कारण राम और कृष्ण को मालिक समझ कर उनकी पूजा करता और उनसे प्रेम करता था। फिर एक घटना मेरे साथ ऐसी घटी जिसने मुझे यह मानने के लिए विवश किया कि वह राम या कृष्ण जो मेरे सामने रहते हैं, बाते करते हैं और मैं इन से आनन्द और प्रसन्नता लेता हूं, वह भी असली मालिक नहीं हैं।

मैं बागांवाला (इस समय पाकिस्तान में) स्टेशन पर रेलवे कर्मचारी था। वहां से कुछ दूरी पर एक तीर्थस्थान है। एक बार वहां कोई मेला था, मैं भी वहां चला गया। जब वापिस आ रहा था, तो कृष्ण मेरे आगे आगे बंसी बजाता हुआ दौड़ रहा था और पीछे पीछे मैं दौड़ा चला आ रहा था। रास्ते में गोबर पड़ा था। कृष्ण ने मुझे कहा कि यह गोवर खा लो। मैंने गोवर खा लिया। जब घर वापिस आया, तो होश आई कि किसी भक्त को आज तक न राम न कृष्ण ने और न ही किसी और ने यह कहा कि तुम गोवर खा लो। इससे मुझे यह विचार

बैठ गया कि यह असली मालिक नहीं है। क्योंकि रामायण से यह विचार मिला हुआ था कि।

नाना भाँति राम अवतारा, रामायण शत कोटी अपारा।

मैं एक खब्त में पड़ गया। इसलिए 24 घंण्टे रोने के बाद एक दृश्य मुझे हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गया। उन के रूप को मालिक का रूप माना, प्रेम किया और पूजा की। जब सत्संगियों से पता चला कि मेरा रूप उनके अन्तर प्रगट हो कर उनके काम करता है और मैं नहीं होता, बल्कि मैं विलकुल नहीं जानता तो विश्वास हो गया कि ऐसे ही मेरे अन्तर भी जो रूप प्रगट होता है, वह मालिक नहीं है। फिर मैं आगे जाने के लिए बिवश हो गया। आगे है प्रकाश और शब्द। अब मैं जब प्रकाश और शब्द में जाता हूं, तो उस वस्तु की खोज करता हूं, जो शब्द को सुनती है और प्रकाश को देखती है। उस अवस्था में पहुंच जाने से मेरे अन्तर एक अवस्था पैदा हो जाती है। उस अवस्था में न गुरु स्वरुप होता है और न कोई और रूप या रंग। वहाँ केवल एक अनुभव होता है

और उस अनुभव का नाम है अगम या अनामी । इस से आगे का मुझे अनुभव तो है, मगर मैं वहाँ अभी तक ठहर नहीं सकता । शायद मरने के बाद ठहर सकूं ।

हिए की पटारी क्या है ? पटारी के ऊपर का ढकना उठा देने से उसके अन्तर में जो वस्तुएं होती हैं, वह दिखाई देने लग जाती हैं । हिए की पटारी खुलने का तातपर्य यह है कि जब परदा उठ गया और ज्ञान हो गया, तो मेरे अन्तर में जो भी भाव, विचार, रंग और रूप चाहे वह अच्छे थे, या बुरे थे प्रेम के थे या प्यार के थे, वह प्रगट हो गये और सुमिरन - ध्यान द्वारा प्रकाश और शब्द मैंने अपने अन्तर में देख लिए । अब मैं इस अनुभव में रहता हूं, अर्थात अपने आप में या अपने self में रहता हूं, उसको enjoy करता हूं और उसका आनन्द लेता हूं:—

हाथ लई मैंने विरह कटारी । काल दुष्ट का सीस कटारी ।।

विरह है लगन । मुझे यह लगन थी कि मेरा मालिक या मेरा आद क्या है ? इस लगन का नाम है विरह की कटारी । अब कहां पहुंचा ? काल दुष्ट का शीश कटारी । मेरे अन्तर के सारे विचार

जिसमें मैं दुख और सुख उठाता था, वह सब समाप्त हो गये। मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव संसार को बता जाऊंगा। मैं जानता हूं कि मेरा सत्संग बहुंत ऊंचा है और आप लोग वहां तक नहीं पहुंच सकते। अकली तौर से तो समझ जाओगे, मगर क्रियात्मक रूप से तब पहूंचेगो जब तुम्हारे अन्तर में विरह होगी। संसारियों को वहाँ जाने की आवश्यकता नहीं है। हर एक आदमी फकीर नहीं बन सकता। संसार में कोई एक ही फकीर होता है। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे एक शब्द में लिखा था।

"जीव अनेक रहें जग अन्दर पर फकीर कोई एक"

अब मैं सोचता हूं कि फकीर! तू वहां तक पहूंच तो गया, लेकिन क्या तू संसार का कुछ कर सकता है? संसार के अन्तर Radiation काम करती है। जो आदमी इस अवस्था में अर्थात अगम लोक में रहता है। उसका विचार संसार में फैलता है। किसी पूर्ण पुरुष का निकला हुआ विचार संसार में फैलता है। इस आधार पर मैंने "मनुष्य बनो" की आवाज उठाई यद्यपि अभी तक लोग मनुष्य नहीं बने मगर यह मानवता का विचार

फैल रहा है। सरकार को भी यह विचार आ रहा है। जब ऐसे आदमी का अर्थात साधक का विचार संसार में फैलता है तो फिर संसार उस विचार से प्रभावित होता है। कलयुग में सन्त इसलिए आते हैं कि साम्प्रदायिक पक्षपात दूर हो जाये। संसार धर्म के नाम पर बटा हुआ है। अब मानवता का विचार किसी न किसी ढंग से फैल रहा है। अब देखो, छूत-छात के बारे में सरकार ने कानून बना दिया है और उस कानून का उलंघन करने वालों को दंड मिलता है। डेरा व्यास में पहले दो लंगर होते थे। एक हिन्दुओं के लिए और दूसरा अछूतों के लिए। अब केवल एक ही लंगर है और उसी में सब लोग भोजन पाते हैं। हजूर राय सालिगराम साहिब जी महाराज एक बार सत्संग करा रहे थे, तो कुछ अछूत सज्जन आ कर एक जगह सत्संग में बैठ गये। हजूर महाराज जी अपने स्थान से उठे और उनके बीच में जाकर बैठ गये और कहा कि समय आ रहा है, जब हमारे और तुम्हारे में कोई भेद भाव नहीं रहेगा। ऐसे महापुरुषों का विचार फैलता है। यदि कोई आदमी ऐसे महापुरुषों का दर्शन करता

है या उसका सत्संग करता है तो उसकी Radiation से दूसरों को लाभ पहूंचता है। इसलिऐ कहा गया है।

भूमि पवित्र होय जहाँ सन्त पग धरें।

सन्तों का विचार संसार में फैलता है। तुम देखो, जहाँ ऋषि मुनि तपस्या किया करते थे, वहाँ उस स्थान में एक दूसरे के विरोधी जानवर इक्ट्ठे रहते थे मगर एक दूसरे को हानि नहीं पहुंचाते थे। क्योंकि वह ऋषि मुनि "अहिंसा परमो धर्मा" का तप किया करते थे। ऐसे ही मेरा सत्संग करने वालों को यदि शान्ति नहीं मिलती तो इस में मेरा दोष है। यदि तुम्हारे भ्रम नहीं जाते, तो यह मेरा दोष है शर्त्त यह है कि, तुम सत्संग के विचार से मेरे पास आते हो। यह सन्त कि महमा है। लेकिन यदि तुम संसार वे झगड़ों और झमेलों के लिए मेरे पास आते हो, धन सन्तान या मान प्रतिष्ठा के लिए आते हो, तो तुमको शान्ति नहीं मिलेगी। हाँ ! यदि तुम्हारा विश्वास है तो तुम को यह वस्तुएं भी मिल सकती हैं। यदि एक दोषी आदमी सच्चे दिल से मालिक के आगे प्रार्थना करता है कि वह इस विपत्ति से बच जाए, तो वह वच सकता है। शर्त यह है

कि वह अपने मन में यह विचार रखे कि वह फिर ऐसी गलती नहीं करेगा। लेकिन वह तो दोबारा वही गलती करता है। फिर वह बचे कैसे ? तो अगम देश में रहने वाले महापुरुष के यह गुण होते है। यदि मेरे दर्शन करने से और मेरा सत्संग करने से आप को शान्ति नहीं मिलती या मुझ पर विश्वास करने से आप के काम पूरे नहीं होते, तो समझ लो कि मैं पूर्ण नहीं हूं और मुझ में कमी है। सन्त की बड़ी .भारी महिमा है शर्त्त यह है कि वह सन्त हो और उसके पास जाने वाला विश्वास से शान्ति के लिए जाये और भविष्य में गलती न करे। फिर भी यदि लाभ न हो तो मैं दोषी हूं और सन्तमत भी पाखण्ड का जाल है। विरह की कटारी क्या है ? तड़प, काल नाम है समय का। जब आदमी के अन्तर विरह पैदा होती है, तो सिवाय एक विचार के जिसके लिए उसके अन्तर तड़प है अन्य सारे विचार समाप्त हो जाते हैं।

तिल का परदा तुरत फटा री, गुरु से लिखाया अमर पटा री।

जो आदमी इस मार्ग पर चलता है, उसका तिल का परदा फट जाता है। तिल का परदा क्या है ? जब हम समाधि में जाते हैं, तो सब कुछ

भूल कर उस स्थान पर पहुंच जाते हैं जहाँ हमारे मन के सब विचार बन्द हो जाते हैं। उस स्थान का नाम तिल है। मैं ऊपर जाता रहता हूं। वह राम क्या निकला? मेरा अपना ही आया और मेरा अपन ही निज स्वरूप। मुझे विश्वास हो गया कि मेरा Self नित्य और अनन्त है, अजर अमर और अविनाशी है। इसका प्रमाण? जाग्रत में तुम कई प्रकार के खेल करते हो, मगर तुम मौजूद रहते हैं। स्वप्न में तुम शरीर को भूल जाते हो, मगर तुम मौजूद रहते हो। ऐसे ही सुषुप्ति में तुम सब कुछ भूल जाते हो, मगर तुम फिर भी रहते हो। लेकिन वह कौन रहता है? वह रहता है जो असल में तुम हो। जब वह असल जो तुम हो, वाहर की बस्तुओं में फंस जाता है, तो दुख और सुख उठाता है। असल में जो तुम हो तुम को उस का ज्ञान नहीं। जब तुम किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग करके अपने अन्तर में चलोगे, तब तुम को उस का पता लगेगा। तुम को अपने अजर और अमर होने का विश्वास कौन कराता है? गुरु यदि गुरु नहीं मिला और सत्संग नहीं मिला तो तुम को यह विश्वास

नहीं आ सकता। यह है "गुरु से लिखाया अमर पटारी"। स्वामी जी महाराज का इस से क्या भाव है, यह मुझे पता नहीं। मैं जो समझता हूं, वह यह है कि बाहर का गुरु सत्संग करा कर जीव को उसके अजर अमर होने का विश्वास करा देता है। मैं जब अपने आप में होता हूं तो उस समय मेरी क्या अवस्था होती है ?

शब्द गुप्त तब रहा अनाम, शब्द प्रगट तब धर्या नाम।

यही बात हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे इस शब्द में लिखी थी।

तू है क्या तू मरकजे आलम है, ऐ मरदे फकीर।
फिर रही है गिरद तेरे, दुनियां खुद होकर असीर ॥
खुद है तू 'इ' और अलफ के, वसफ से हरदम जुदा।
'इ' मिली आई खुदी, जब है 'अलफ' तब है खुदा ॥
यह सिफाती नाम सारे, खुद है तू इन सब का असल।
सब के सब औसाफ क्या हैं, असल के हैं यह सब नकल ॥
असल तू है मकसदे, कोनीन तेरी नकल सब।
ज्ञान ध्यान और गौर क्या है, तेरी ही है अकल सब ॥
नूर से तेरे मनुव्वर, आसमां के मेहरो माह।
तेरी ही अजमत के हैं, यह अकस कदरो इज्जो जाह ॥
तू है दाना तू है नादां, दोनों तुझ से हैं अयां।
इनके परदों में हमेशा, जात तेरी है निहां ॥
तहतो फौको वस्त का, तेरे ही ऊपर इन्हसार।

जान कर अन्जान है, अन्जान का है जानकार ॥
तू न अकलो होश है, और तू कहां बेहोश है।
खेल में है इन के मायल, हस्ती में मदहोश है ॥
जागता है सोता है, दोनों से जब ऊंचे चढ़ा।
जात का अपने यहाँ, आया तो पाता है पता ॥
इस पते की भी तुझे, दरअसल कुछ परवाह नहीं।
तेरे जैसी शान का, कोई आज तक देखा नहीं।
जात में अपनी हुआ गुम, फिर तू पाता है पता।
इसलिए यह भेद सारा, आज तुम को दे दिया ॥
इस पते की भी तुझे, दरअसल कूछ परवाह नहीं।
जब समझ आई, तो जिसमो दिल की भी परवाह नहीं ॥

हम सब उस मालिक की अंश हैं। लेकिन यह पता गुरु देता है। हम इस संसार में इसलिए दुख और सुख उठाते हैं और इसलिए हाय हाय करते हैं कि हम को अपने रूप का ज्ञान नहीं है। हमारा Self अर्थात हमारा अपना आपा इस संसार को सत मानकर इस में फस जाता है और दुख और सुख उठाता है। प्रकृति में परिवर्तन के कारण हम को दुख और सुख का आना अनिवार्य है। जिसको ज्ञान हो जाता है वह संसार में चिन्ता और फिकर नहीं करता।

देख लिया अब मूल अटारी, बांध लई मैंने प्रेम जटारी।

वह कहते हैं कि मैंने अब अगम देश में जाकर सब कुछ देख लिया है। इस मंजल पर वह जा सकता है जिस में प्रेम और प्यार हो। कई आदमी मालिक से तो प्रेम करते हैं मगर अपने घरवालों, से सम्बन्धियों से या संसारिक वस्तुओं से वह घृणा करते हैं। उनमें प्रेम नहीं है और न ही वह मालिक के प्रेमी हो सकते हैं। क्यों ?

"जहां प्रेम बाज़ बासा करे, बहां पक्षी रहे न को।"

जहां प्रेम है वहां घृणा का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। जहाँ "बाज़" रहता है, वहां दूसरा कोई पक्षी रह नहीं सकता। यही कारण है कि सन्त किसी से भी घृणा नहीं करते। संसार वालों की दृष्टि में एक आदमी चाहे कितना भी बुरा हो, लेकिन सन्त उस से भी प्रेम करते हैं। क्योंकि उन के दिल में प्रेम होता है। एक आदमी अपने आपको सन्त समझता है लेकिन वह अपने घरवालों से दूसरों, से, या किसी शराबी से घृणा करता है तो वह सन्त नहीं है। क्योंकि उसने प्रेम सीखा ही नहीं है। हजूर दाता दयाल जी महाराज की एक घटना सुनो, जेहलम (इस समय पाकिस्थान में) निवासी एक सेठ था उसने

एक मुसलमान वैश्या रखी हुई थी। बरादरी वालों ने उसको बरादरी से बाहर कर रखा था। वह सेठ कभी-कभी उस वैश्या को साथ लेकर लाहौर में हजूर दाता दयाल जी महाराज के पास आया करता था। जब वह आता तो हजूर उठकर खड़े हो जाते और दोनों हाथ जोड़ कर उस वैश्या से कहते कि "माता जी ! राधास्वामी" इस से सिद्ध हुआ कि हजूर दाता दयाल जी महाराज के दिल पर उनके बुरे कर्म का कोई प्रभाव नहीं था। यह है प्रेम की पहिचान। सन्त के दिल में किसी से भी घृणा नहीं होती। हम लोग चोर को, शराबी को या किसी और बुरा कर्म करने वाले को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। लेकिन फकीरों के दरवार में वैश्या कवाली गाया करती थी या और गाने गाया करती थी। सन्त या फकीर वह है जिसको किसी से घृणा नहीं है। लेकिन आजकल क्या हो रहा है ? पब्लिक तो एक ओर रह गई, यह गद्दीपति एक दूसरे को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इनके आपसी झगड़े चलते हैं। जो अगम देश में पहुंच जाता है उसके दिल में किसी से घृणा नहीं रहती। आप

लोग किसी को अच्छा और किसी को बुरा समझते हैं। लेकिन सन्त ऐसा नहीं करते। हजूर दाता दयाल जी महाराज किसी की शिकायत नहीं करते थे और न ही किसी की शिकायत सुनते थे। उनके पास एक मैनेजर था। वह सत्संगियों से पैसे ले लेता था मगर, उनको किताबें नहीं भेजता था। हकीम वली-राम से भी उसने ऐसा ही किया। उसने एक दिन हजूर से शिकायत की लेकिन, उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। दूसरे दिन फिर कहा, तो आप ने कहा कि वलीराम! जो करेगा वह भरेगा। मुझे क्या ?

मुझमें अभ तक कमी है। फकीर के दिल में किसी के लिए कोई बुराई नहीं होती और वह सब से प्रेम करता है। राधास्वामी दयाल ने अपनी वाणी में लिखा है कि सत्गुरु प्रेम स्वरूप हैं कहीं वह सिंध रूप में हैं, कहीं बून्द रूप में हैं, कहीं लहर रूप में है और कहीं दरिया रूप में हैं घरवालों से प्रेम करना लहर रूप प्रेम है सब का भला चाहना नदी रूप प्रेम है और फिर मालिक के प्रेम में लीन हो जाना सिन्ध रूप प्रेम है। घर में सब से प्रेम करो। हम लोग मुंह से ही प्रेम-प्रेम करते हैं मगर प्रेम

कोई नहीं करता। आजकल तो भाई-भाई का शत्रु है, बाप बेटे में शत्रुता है, स्त्री पुरुष में अनबन है और इसलिए हम दुख उठाते हैं।

छोड़ दिया जग देख मठा री, काम क्रोध अब दूर हटा री।

अगम देश में पता लग जाता है कि संसार क्या है। संसार माया है। है नहीं मगर भासता है। अगम देश में जाने से छुटकारा मिलता है। त्रिकुटि में साधन करने वाला मेर-तेर से नहीं बच सकता, सुन्न महासुन्न वाले भी नहीं बच सकते। अगम की और मंजल है। Agam is the last stage of life.

लोभ मोह मेरा आज घटारी, करम भरम सब आप लटारी।

वहाँ पहुंच जाने से सब कुछ समाप्त हो जाता है। यह सन्तों के जीवन को अन्तिम अवस्था है। मैं अगम देश का बासी हूं। अनामीधाम का मुझे अनुभव है। मगर मैं वहाँ अभी तक ठहर नहीं सकता। जब कभी मुझे यह ज्ञान भूल जाता है तो मैं भी गिर जाता हूं। मगर फिर सम्भल जाता हूं।

मन करे मेरा खेल नटा री। भर गया मेरा प्रेम घटा री।

अब मेरा मन जो खेल करता है, यह प्रेम का सौदा करता है। फिर जब तक जीवन है, मन तो साथ रहेगा ही। कई आदमीं कहते हैं कि मन को मारो।

लेकिन मन कभी मरता नहीं। यदि मन मर गया तो तुम जीवित नहीं रह सकते। जैसे तुम यदि दिल को बंद कर दोगे, तो तुम्हारी मौत हो जायेगी। मन में ऐसे भाव भरो, कि मन तुम्हारे लिये दुख का कारण न बने। मन को कोई मार नहीं सकता। यह केवल कहने की बातें हैं। जितनी देर तुम प्रकाश और शब्द में रहोगे या इस से भी आगे रहोगे उतनी देर तुम मन से परे रहोगे। उसके बाद तुम फिर मन में आ जाओगे। लेकिन जिसको मन के रूप का ज्ञान हो जाता है, वह फिर इसके चक्कर में नहीं आता। लोग कहते हैं कि काम क्रोध, लोभ, मोह एवं अहकार को मारो। मार दो भई। अरे! जिस का काम मर गया, वह तो हीजड़ा बन गया और ताली ही बजाता रहेगा सारी आयु। जिसका क्रोध मर जायेगा, उसको तो लोग फुटबाल बना देंगे। ऐसे ही यदि तुम में लोभ नहीं है या मोह नहीं है, तो जीवन बेकाम हो जायेगा। तातपर्य यह है कि इनके स्थूल रूप को समझ कर उनमें रहो। काम केवल भोग का नाम ही नहीं है। काम क्या है ?

काम काम सब कोई कहे. काम न चीन्हे कोय।
जेती मन की कामना, काम कहावे सोय॥

किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग में जाकर भेद को समझो। मन की कल्पनाओं को मिटाओ और जीने की विधि सीखो।

दुख सुख संसग सभी घटा री। छाय गई अब विरह घटा री।

जब आदमी वहाँ पहुंच जाता है तो फिर वह अपने आप से आप प्रेम करता है। गुरु को अपने से अलग नहीं समझता। जब तक वह गुरु को बाबा फकीर या कोई और गुरु समझता है या यह समझता है, कि मेरा गुरु होशियारपुर में, व्यास, आगरे या देहली में रहता है। वह इस मंज़िल तक नहीं पहुंच सकता। हजूर दाता दयाल ने मुझे बहुत समझाया। मगर मुझे असलियत की समझ नहीं आती थी। इसलिए उन्होंने मुझे एक बार एक शब्द लिखकर भेजा।

काहे बौराना हाय फकीरवा॥
तेरे घट में माल खजाना, भया दीवाना हाय
फकीरवा॥ काहे
जाकी चाह में खोजत डोले, मन में समाना हाय
फकीरवा॥ ,,

तीरथ बरत सभी तेरे भीतर, नहीं कहीं जाना हाय
फकीरवा ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी नित गुन गाना हाय
फकीरवा ॥

उन्होंने मेरे लिए हाय का शब्द प्रयोग किया। मैं उनको गुरु मानकर उनसे प्रेम करता था और वह मुझे पागल और दीवाना कहा करते थे। एक बार उन्होंने मुझे लिखा कि।

गुरु तो तेरे पास फकीरा, गुरु तो तेरे पास ॥
त्याग भरम विचार मनका. छोड़ जग की आस।
आस कर गुरु चरन की, सबसे होय निरास ॥ फकीरा०
तेरे मन में तेरे तन में तेरे स्वासों स्वास।
गुरु बसे दिन रात प्यारे, धर चरन विश्वास ॥ फकीरा०
गुरु नहिं तीरथ बरत में, गुरु न योग अभ्यास।
ढूंढ अपने हृदय में नित, वहां उनका बास ॥ फकीरा०
कर्म में माया है ब्यापी, धर्म यम की फांस।
बन में अनबन देखो मन मैं, भ्रम था संन्यास ॥ फकीरा०
तेरी चिन्ता गुरु को होगी, क्यों है तुमको त्रास।
राधास्वामी चरन गह. अज्ञान का कर नास ॥ फकीरा०

क्योंकि मुझे यह समझ नहीं आती थी, इसलिए उन्होंने मुझे यह काम दिया था। मैं न गुरु हूं न महात्मा हूं। तुम्हारे जैसा एक व्यक्ति हूं। मैं हजूर की बहुत सेवा करता था और उनको तंग भी किया

करता था क्योंकि असलियत को समझना चाहता था मगर, उन्होंने मेरी तरह स्पष्ट वर्णन नहीं किया। स्पष्ट वर्णन किसी ने भी नहीं किया। क्योंकि स्पष्ट वर्णन करने से धन नहीं आता, डेरे नहीं बनते और न ही डेरे चलते हैं। अब तुम देखो मेरे पास कितने आदमी आते हैं ? जहाँ सब्ज बाग दिखाये जाते हैं, वहां कितनी भीड़ होती है वे सब अज्ञानी हैं।

मानसरोवर पाया तटारी, फतह किया गढ़ झटापटा री।

आदमी के अन्तर मानसरोवर या पानी का तालाब नहीं है। मैं भी कभी ऐसा ही समझता था और अपने अन्तर फूल फलवाड़ी और तालाब इत्यादि देखा करता था। मगर अब मेरा अनुभव इसके उल्टा सिद्ध हुआ। कैसे ? कुछ वर्ष हुये मेरे सत्संग में एक आदमी आया और मेरे पावों पर सिर रखकर रोने लगा। मैंने कारण पूछा तो उसने बताया कि मैंने एक जगह से नाम लिया और अभ्यास करने लग गया। अभ्यास में एक दिन मुझे अन्तर में एक तालाब दिखाई दिया। उस तालाब में बहुत अच्छे फूल और विभिन्न प्रकार के सुन्दर जानवर थे। तालाब के किनारे पर एक साधू खड़ा था। उसने

मुझे कहा, कि तुम मेरे पास आ जाओ। इतने में आँख खुल गई। मैं उस साधू की खोज में ब्यास, आगरा, देहली, हरिद्वार और जगह-जगह गया। मगर, वह महात्मा न मिला। फिर मुझे किसी ने कहा कि होशियारपुर जाओ। अब यहाँ आ कर देखा तो आप वही हैं जो मेरे अन्तर आये थे। अब क्योंकि मैं इसके अन्तर नहीं गया तो इससे सिद्ध हुआ कि इस आदमी के अन्तर जो फूल, जानवर या तालाब दिखाई दिया, वह भी नहीं थे। सब उसके मन के संस्कार थे या उसके मन की कल्पना थी। जिस वस्तु की किसी को बहुत इच्छा और सच्ची लगन होती है, प्रकृति उसको वहाँ पहुंचा देती है जहाँ से उसको वह वस्तु मिल सके। यह है प्रकृति का नियम LAW OF NATURE.

डाक्टर आई सी शर्मा (Dr. I. C. Sharma) उदयपुर (राजस्थान) का एक दार्शनिक (Philosopher) है। वह 1965 में दिल्ली में सत्संग में आया। उसने मुझे बताया कि आज मैंने पहली बार आपके दर्शन किये हैं। आप का रूप 1959 में मेरे अन्तर प्रकट हुआ था और कहा था कि इस जन्म में तुमको वह वस्तु मिल जायेगी जिसकी खोज है।

इसलिए सच्चे दिल से उसके दरवार में मांगो। जिस वस्तु की तुमको प्रबल इच्छा होगी, वह अवश्य मिलेगी। कोई रोक नहीं सकता। यह प्रकृति का नियम है। मेरे छोटे भाई सुरेन्द्र नाथ का बचपन में वड़े आदमियों के लड़कों से मेल-मिलाप था। वह भी यह सोचा करता था कि मैं एक बड़ा आदमी वनूंगा और वह बन गया। इसलिए जिस वस्तु की तुमको इच्छा है उसकी प्रबल इच्छा रखो। वह वस्तु अवश्य मिलेगी। मगर हेराफेरी मत करो और अपनी इच्छा को मत बदलो। जो अपनी इच्छा को बदलते रहते हैं उनको कुछ नहीं मिलता।

एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाये।

संसार में सारे सुख कभी किसी को नहीं मिले। इस लिए एक वस्तु मांगो और एक बात और ध्यान में रखो कि छोटे मुकदमे का फैसला जल्दी हो जाता है और बड़े मुकदमें के फैसले को समय लगता है। मैं सात बर्ष की आयु से राम को मिलने निकला था। क्योंकि एक ही विचार था, इसलिए मैं सफल हो गया। मेरे सत्संग से नुकते ले जाओ और उस पर अमल करो। जितना ज्यादा कोई बुद्धिमान होगा

और जितना ज्यादा पढ़ा लिखा होगा उतने ही उसको ज्यादा भ्रम होंगे। जीवन में मुझे इन धार्मिक वाणियों ने चकित कर रखा था। मैंने एक को पकड़ा और दूसरी जगह नहीं गया। मुझे भेद समझ में आ गया और अब मैं सुखी हूं।

अमल किया जाय अगम पुरी में, झांक रही अब सुन झंझरी में।

अगम में जो शब्द होता है, वह है नाम। उस को सुनने से शान्ति मिलती है।

धुन धधकार उठी जहां भारी, तीन लोक से हो गई न्यारी।

तीन लोक क्या है ? शरीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भान। हम इन तीनों से न्यारे हैं और इनके साक्षी हैं।

धड़की छाती काल शिकारी, धर धर रोवे माया पुकारी॥

यह वर्णनशैली है। वह कहते हैं कि जब जीव काल और माया से निकल जाता है तो काल और माया रोते हैं कि यह हमारे जाल से निकल गया। तातपर्य यह है कि बुद्धि या मन जो नाना प्रकार के विचार उठाते थे वे अब बन्द हो गये।

इन मेरा अब देश उज़ाड़ी, क्या ऐसी अब मन में धारी।
विनती करूं अब राधास्वामी पै, और उपाय नहीं अब मो पै।

और जीव कोई अब न चितावें. घर मेरा जो चाहें बसावें ॥
बहु तक जीव लिये है उबारी. एक जीब यह सब पर भारी ।
बन्द करो अब अपना रस्ता, बहुत किया तुम मार्ग सस्ता ॥

माया और काल मालिक से प्रार्थना करते हैं, कि अब और जीवों को चिताया न जाये ताकि हमारा बसा हुआ घर उजड़ न जाये। एक जीव जो इस गति पर पहुंच जाता है वह और बहुत से जीवों को ले जाता है। मैंने जो समझा है वह बताता हूं कि माया का जाल बहुत जबरदस्त है। मैं इतना ऊंचा चढ़ जाने के बाद भी कभी-कभी फंस जाता हूं। मैंने तो स्वामी जी महाराज से भी यह मार्ग सरल कर दिया है। यदि तुम क्रियात्मक जीवन में नहीं भी आओगे, तो कम से कम अकली तौर से अवश्य समझ जाओगे।

सुन लो स्वामी बिनती मोरी, मैं आई अब सरना तोरी।
और जीव तेरे में हूं किसकी, मैं भी पकड़ी ओटा अब की ॥

यह समझाने के लिए वर्णनशैली है।

सुन कर बचन सुवामी बोले। छल बल तेरे सब हम तोले ॥
जीव हमारा तू नाहि पावे। अमर लोक को सीदा जावे ॥

वह कहते हैं कि सन्तों का जीव सीधा सतलोक को

जायेगा। यह ठीक है। मगर कौन सा जीव सतलोक को जायेगा ? जो सत्संग में गुरु के बचनों को ध्यान से सुनेगा और उन पर अमल करेगा। दूसरा नहीं। मैं कहा करता हूं कि जिन लोगों ने ध्यान से मेरा सत्संग सुना है यदि जीवन में उनसे कुछ नहीं भी बन सका, तो अन्त समय पर यदि वह चेतन रहे, तो उस समय उनके सामने जो फिल्म चलेगी, उसमें मेरा यह ज्ञान भी उनके सामने आयेगा और वह तुरन्त समझ जायेंगे और रूप रंग आदि को छोड़ कर प्रकाश और शब्द की ओर चले जायेंगे। इसलिए यदि तुम लोग मेरे पास सत्संग के लिए आते हो और ध्यान से मेरी बात को सुनते हो तो तुम्हारा अकाज नहीं होगा। यदि इस जीवन में कुछ न बन सका तो भी कोई बात नहीं। अन्त समय पर यदि यह ज्ञान याद रह गया तो तुम काल और माया से निकल जाओगे। यह सन्त की महमा है।

सिमृत शास्तर वेद पुराना, इनमें सब जीव आय फसाना।

सिवाय अगम देश के अन्य सब तुमको फंसाते हैं। किसी ने राम के साथ फंसाया, किसी ने कृष्ण के साथ फंसाया, किसी ने देवी-देवते के साथ फंसाया

किसी ने कर्म और किसी ने ज्ञान में फंसाया। अब लोग गुरु में फंसाते हैं। गुरु की देह में मत फंसो गुरु की बात को समझ कर उस पर आचरण करो। तब बेड़ा पार होगा और यह चक्कर समाप्त होगा यदि इनमें फंसे रहोगे तो संसार में तो सुख मिलेगा मगर लक्ष्य प्राप्त नहीं होगा।

सन्त पंथ का मारग छूटा, तीरथ बर्त नेम कर लूटा।
बहुत पुजाया पत्थर पानी, करम भरम में जिन लिपटानी।

तुम लाख कर्म करो। तुमको संसार का सुख तो मिलेगा, सिद्धि शक्ति भी आ जायेगी, मगर माया के चक्कर से नहीं बच सकोगे।

ज्ञान ध्यान सब बाचक फैला, जोग जुक्ति में ठेलमठेला।

यह सब ज्ञान ध्यान ही तो है। कोई कहता है मैं आत्मा हूं कोई कहता है कि मैं ब्रह्म हूं, कोई कुछ कहता है इससे कुछ नहीं बनता है।

साधन चारों सब के ढीले, जो समझाओ तो करें दलीलें।

साधन तो सभी करते हैं लेकिन सत्संग में जाके बात को समझ कर अपने रूप का ज्ञान प्राप्त करो यह साधन पूर्ण है। आवागवन से बचने का यह साधन

है कि रूप रंग को छोड़कर अपने अन्तर में आप को ठहराओ।

मन अभिमानी जैसे फीले, संत पंथ में ढीले-ढीले ॥

यदि ध्यान बनना आरम्भ हो गया और थोड़ी सी सिद्धि शक्ति आ गई तो आदमी के मन में अहंकार आ जाता है कि मैं कुछ बन गया हूं और यह कर सकता हूं और वह कर सकता हूं। मैं प्रसाद दे सकता हूं और दूसरों को ठीक कर सकता हूं। अहंकार में आकर सब कुछ खो बैठता हूं।

न गुरु भक्ति न नाम सनेहा, कहो तो कहें हम आगे किया।

गुरु भक्ति क्या है? इस समय तुम सत्संग में बैठे हुये ध्यान से मेरी बात को सुन रहे हो। यह गुरु भक्ति है।

दर्शन करे बचन पुनि सुने, सुन-सुन कर फिर मन में गुने।
गुन-गुन काढ़ लेवे तिस सार, काढ़ सार तिस करे अहार।
कर अहार पुष्ट हुआ भाई, जग भव भय सब गई गंवाई।

यह असली गुरु भक्ति है। यदि धन से परमार्थ मिल सकता होता तो यह बड़े-बड़े धनी लोग सब ही परमार्थ को मोल ले लेते। यह लेना देना तो संसारिक व्यवहार है। धन दोगे तो धन मिलेगा।

मान दोगे तो मान मिलेगा । प्रेम दोगे तो प्रेम मिलेगा । घृणा करोगे तो दूसरे तुम से घृणा करेंगे । जो दोगे वही मिलेगा ।

पिछले जन्म का धोखा दे हैं विषई जीव को ले भरमैं हैं ।

जो लोग ससार में फसे हुये हैं और दुखी हैं, गुरु लोग उनको ऐसी वैसी बातें कह कर, धोखा देकर और अज्ञान में रखकर अपने पीछे लगा लेते हैं ।

बालपने से बिषय कमाये विद्या पढ़-पढ़ बुद्धि बढ़ाये ॥
बुद्धि बिलास क्रिया अब सबने, मान बढ़ाई में लगे खपने ।

बचपन में विषय कमाया और फिर जब बुद्धि आ गई तो उसके साथ दौड़ते रहे । इसलिए तो मैं कहा करता हूं कि शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य का पालन करो । मैं अपने बारे जानता हूं कि मुझे 1905 में नाम मिला । मैं प्रेमी भी था और भक्त भी था । क्योंकि मैं विषई था इसलिए 1916 तक न प्रकाश आया और न शब्द खुला लेकिन मैंने हौसला नहीं छोड़ा । इस लिए मैं कहा करता हूं कि अपने बच्चों के लिए धन सम्पत्ति बेशक न छोड़ के जाओ, मगर उनका चरित्र बना के जाओ । क्यों ?

If wealth is lost nothing is lost,
If health is lost, some thing is lost,
If character is lost, every thing is lost.

इसलिए मैंने शिक्षा को बदला है। देखो ! जब तक तुम्हारा अपना चरित्र ठीक नहीं है, तुम अपने बच्चों का चरित्र ठीक नहीं कर सकते। इसलिए पहले अपना चरित्र ठीक करो।

देखो न्याव कर मन में अपने, बुद्धि से जग को कहते सुपने।
मन तरंग में छिन-छिन बहते, तब जग को जाग्रत सम कहते।

अपने आप को सम्भालो। मन की तरंगों में मत आओ। अभ्यास में गुरु स्वरुप से बातें मत करो। यह जो गुरुस्वरुप तुम्हारे अन्तर में प्रगट होता है, इससे तुमको जो उत्तर मिलेगा, वह उन बातों का होगा जो तुम्हारे अपने ही मस्तिक में पहले से मौजूद हैं। इसलिए सुमिरन ध्यान करो, मगर अपने अन्तर में गुरुस्वरुप से बातें मत करो। बाहर का गुरु तो तुम्हारे अन्तर आता नहीं है। वह तो तुम्हारे अपने ही मन का बनाया हुआ रूप होता है। और जो रूप रंग तुम्हारे सामने आते हैं, वह भी तुम्हारे मस्तिष्क पर पड़े हुये संस्कार होते हैं। भगतराम !

सुन रहे हो ? तुम्हारे अन्तर कितनी बातें होती थीं । मैं तो गया नहीं । यह भेद किसी भी सन्त ने नहीं खोला, मैंने खोला है । सुमिरन ध्यान से मनको ठीक करो और बाहर का गुरु जो समझ देता है, उसके अनुसार अपना जीवन बनाओ ।

कोई उनका जरा करे अपमाना, या कोई का वह देखे माना ।
करें ईर्षा उसकी भारी, क्रोध करें अति छाती जारी ।

देखो तुम साधन अभ्यास करते हो, लेकिन यदि कोई आदमी तुमको तनिक सी बात कह देता है तो तुमको क्रोध आ जाता है । क्या लाभ ऐसे अभ्यास से ? तुम उससे ईर्षा द्वेष करते हो, बदला लेने की भावना रखते हो । यह सन्तमत नहीं है और न ही यह सन्तों का मार्ग है ।

बाहर सूरत बहुत बनावैं, अंतर में तलवार चलावें ।
यह उनके है मन की रहनी, परख-परख मैं सब कह दीनी ।

बाहर में तो हम भक्त हैं और हमारे अन्तर में शत्रुता है । यह हम लोगों की रहनी है ।

ज्ञान मते को दाग लगाया, ऐसा ही मत क्या ब्यास चलाया ।

अपने आप को तुम ज्ञानी प्रकट करते हो ।

मगर दिल के अन्तर तुम दूसरों के लिए शत्रुता रखते हो ।

वह तो भये जोग मत सूरे. ज्ञान ध्यान उन पाया पूरे ।

तुम अपनी रहनी को देखो । दूसरों की नकल मत करो ।

ब्रह्म देश उन बासा कीना, मन और सुरत करी वहिं लीना ।

पता नहीं सन्तों का ब्रह्म देश क्या है । मैं यह समझता हूं कि प्रकाशमय हो जाना ही ब्रह्म देश में जाना है । जो प्रकाश में रहता है वही ब्रह्म में रहता है । यह जो कुछ मैंने आज कहा है, यह किसी को नहीं कहा । मैंने अपने ही आपको समझाया है । यह मेरा कर्म भोग है । पंथ में आया वाणियाँ सुनी । सचाई देखना चाहता था । अब समझ आ गई कि सन्त-मत बातों का विषय नहीं है, यह क्रियात्मक विषय है । इसलिए आचरण करो और साधन करो । मगर गृहस्थी लोगों के लिए यह कठिन बात है । हम जीव हैं । करें क्या ? कई बार सोचता हूं कि फकीर ! तेरा जीवन तो बीत गया । लेकिन इन गृहस्थियों का क्या हाल । पति पत्नी का एक दूसरे से लड़ाई झगड़ा । भाईयों के मुकदमे और बाप-बेटे की आपस

की कशमकश । इस लिए तेरा कुछ कहना सुनना या उपदेश करना व्यर्थ है । गृहस्थी भी क्या करे । रोटी का प्रश्न है । मेरा जीवन तो इस लिए अच्छा बीत गया कि मुझे रोटी की चिन्ता नहीं रही । मालिक ने कोई न कोई प्रबन्ध कर दिया । अब भी दो तीन आदमी मेरो सहायता करते हैं । यदि मुझे रोटी की चिन्ता होती और फिर भी मैं यह काम करता तब मेरी बहादुरी थी । इस लिए गृहस्थियों के लिए यह कठिन काम है । प्रकृति ने मेरो दशा अच्छी कर दी । इस लिए बाते कर रहा हूं । सच पूछो तो !

जिस पर दया आद कर्ता की सो यह नयामत पावे

गृहस्थियों के लिए बहुत कठिन है । मैं खूब जानता हूं । फिर क्या किया जाये ? शरणागतम । यही समझ में आया कि ऐ बन्दे ! जो कुछ हो रहा है उस को सहन कर । समझते हो ओम प्रकाश ! मैं तुम्हारा हमदरद हूं । जिसने लेना हैं वह हर दशा में ले लेगा । कोई गुरु बनके लेगा, कोई चेला बनके लेगा, कोई बाप बनके लेगा, कोई बेटा बनके लेगा, कोई भाई बनके लेगा, कोई चोर बनके लेगा और कोई डाकू बनके लेगा । मन को समझाने का प्रयत्न

करो और अपने दिल को साफ रखो। उसके शरणागत हो जाओ और अपने आपको उसके हवाले कर दो। राजी बर रज़ा रहने का यत्न करो। जो कर्म में लिखा है वह अवश्य मिल जाये गा।

लख न परे तेरी माया स्वामी लख न परे तेरी माया।
जित देखूं तित तेरी लीला। धूप अन्ध अरू छाया।।
रज सत तम में रहत निरन्तर अगम अनाम अमाया। स्वामी
जनम मरन संसार से न्यारा। नहीं आया नहीं जाया
जीव अजीव में डोलत घूमें, वार पार नहीं पाया। स्वामी
निराकार सर्वज्ञ निरुपम। रुप प्रेम अरु दाया।
निर्गुण सगुन सकल तेरी रचना। सब के पार न्हाया।
भक्त जनन प्रेम की मूरत। सत संगत कुछ पाया।
बार बार चरनन वल जाऊं। गुरु प्राण अरू काया।
आजा घट में मेरे बसजा। निस दिन प्रीत लगाया।

सारा जीवन पंथ की खोज करते २ अब सब पंख झड़ गये क्या समझ में आया। शरनागतम। सिवाय शरणागतम के ओर कहीं शान्ती नहीं है।

'सब को राधा स्वामी'

सत्संग हजूर परम सन्त परमदयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर

दिनांक 25 मई 1975

अद्वैत द्वैत के फेर पड़ा। अभिमानी एक का दो का है।
में सच २ तुझ से कहता हू। यह भूल भरम और धोका है।
नहीं एक न दो नहीं तीन चार नहीं सौ पचास नहीं सहस्रार।
तू जैसा चाहे माना कर, इस मान से किस ने रोका हैं।
जैसा है तैसा समझ उसे नहीं वह ऐसा नहीं वह वैसा।
नहीं एति न नेति न सत न असत, न असोक सोक नहीं सोका है।
बातों के फेर पड़े ज्ञानी, अभिमानी मानी गमानी बने।
वह ज्ञान नहीं अज्ञान नहीं बन्द न खुला झरोका है।
जा कुछ दिन कर संगत गुरु की, तब सार तत्व को जानेगा।
किसने उसे जाना बूझा है, और जान बूझकर ठोका है।
सब कुछ है और कुछ भी नहीं, लख अलख अगम गम है दोनों।
वह वार न पार न आदि अंत, नहीं सिरा है न नूका है।
राधास्वामी की शरन में आ, तब अनुभव से कुछ जानेगा।
वह रुद्र वसु आदित्य नहीं, नहीं नीर पवन का झोंका हैं।

राधास्वामी। यह शब्द सुना। अपना बचपन को जीवन याद आता है। मैं छोटी आयु से राम को मिलने निकला था। सनातन धर्म के संस्कार मिले। राम को मिलने की मन में तड़प थी। वह तड़प या मेरा भाग्य समझो या मालिक की मौज समझो मुझे हजूर दाता दयाल माहर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गई। मैंने उनको राम समझ के पूजा। उन्होंने मेरे विचार को बदलकर गुरुमत की और लगाया। अब 88½ साल का हो गया हूं। यह तड़प रहती है कि जिस तत्व में से मैं आया हूं उसमें मिलूं। प्रति दिन अभ्यास करता हूं। अपने आप से प्रश्न करता हूं कि क्या तुमको राम मिल गया ? यदि कभी गुरुस्वरुप के दर्शन हो जाते तो मैं समझता कि राम मिल गया और मैं बहुत खुश होता। यदि अन्तर में प्रकाश हो जाता तो मैं समझता कि मुझे ब्रह्म मिल गया मैं बहुत प्रसन्न होता और शब्द सुन लेता तो समझता कि मालिक मिल गया और मैं शब्द को ही सब कुछ समझता। मगर लालसा फिर भी समाप्त नहीं होती थी। शब्द को सुनने के बाद भी यह खोज समाप्त नहीं हूई। अब यह शब्द सुना :—

अद्वैत द्वैत के फेर पड़ा, अभिमानी एक का दो का है।

जो उसको अद्वैत मानते हैं या द्वैत मानते हैं वह अभिमानी हैं किसी वस्तु के मान करने का नाम अभिमान है। मान लो कि मेरे पास पैसा है और उसका मान करता हूं तो मेरा वह अभिमान है। जो उस मालिक को अद्वैत या द्वैत समझता है वह अपने मन के संकल्प से ही तो मानता है। वह अभिमानी है। यह बिलकुल ठीक है। यह ठीक होने का ज्ञान मुझे आप लोगों से मिला। कैसे ? मेरा रूप तुम लोगों के अन्तर प्रकट हो कर तुम्हारे काम करता है और में नहीं होता। लेकिन जिसके अन्तर मेरा रूप प्रगट होता है, वह तो यह समझता है कि मेरे अन्तर बाबा आया और यह कहा और वह कहा। इसलिए वह अभिमानी है। इसलिए द्वैत और अद्वैत को बनाने वाले और मानने वालेहम हैं। हम अपने ही भाव से द्वैतवादी और अपने ही भाव से अद्वैत वादी बन जाते हैं। मुझ पर हजूर दाता दयाल जी महाराज का आभार है। यदि वह मुझको यह काम न देते, तो मुझे इस असलियत की समझ न आती। दूसरा आप लोगों का अभारी हूं। कोई

कहता है कि आपने यह कर दिया, और कोई कहता है आपने वह कर दिया । लेकिन मैं तो किसी के अन्तर न जाता हूं और न ही मुझे कोई ज्ञान हो ा है । इसलिए वह जो कहते हैं कि बाबा आया । यह सब उनका अपना अभिमान है ऐसे ही उस मालिक को अद्वैत और द्वैत मानने वाले तुम स्वयं हो और अभिमानी हो । यह धार्मिक द्वेष, झगड़े और रक्तपात इस अभिमान का परिणाम हैं :—

मैं सच सच तुझसे कहता हूं। यह भूल भरम और धोखा है ॥

तुम्हारे अन्तर जो रूप प्रकट होता है । वह भूल भरम और धोखा है । पहले मुझे भी इस बात का पता नहीं था । अब समझ आई । लोग कहते हैं, कि आप प्रकट हुये । लेकिन मैं तो होता नहीं । तो इस एक विचार से मेरा जीवन बदल गया । तुम अपने ही मन से मानते हो कि बाबा आया, लेकिन मैं तो जाता नहीं तो फिर यह धोखा हुआ कि न हुआ । ऐसे ही द्वैत और अद्वैत धोखा है :—

नहीं एक न दो नहीं तीन चार, नहीं सौ पचास नहीं सहस्रार ।
तू जैसा चाहे माना कर, इस मान से किसने रोका है ॥

वह न एक है, न दो है, न पचास है और न

हज़ार है। यह तुम्हारी इच्छा है तुम उस मालिक को जैसा चाहो मान लो और आनन्द लेलो। असल में वह क्या है। यह किसी को पता नहीं। धर्म और पंथ बनाने वाले तुम स्वयं हो। यह उस मालिक ने नहीं बनाये।

नहीं ऐति न नेति न सत न असत, न असोक सोक नहीं सोका हो।

वह न ऐति है, न नेति है। वह कुछ भी नहीं और वह सब कुछ है। उसको जैसा जिसने मान लिया वह वैसा ही है। तुमको मानने का फल मिलता है। कई लोग मुझे करनीवाला मान लेते हैं। मुझ से प्रसाद ले जाते हैं और उनके लड़के हो जाते हैं। दुख दूर हो जाते हैं। क्या मैं कुछ करता हूं? नहीं। दो तीन दिन से राजस्थान से एक स्त्री यहां आई हुई है उसका पति फौज में काम करता है। मैंने पूछा कि बेटो! तू इतनी दूर से कैसे आई? तो वह कहने लगी कि बाबा जी! मेरे लड़का नहीं था मुझे एक आदमी ने आपकी बाबत बताया तो हम दो वर्ष हुये यहां आये थे। आपसे प्रसाद ले गई थी। अब यह मेरा लड़का

सात महीने का है। बाबा जी ! मुझ को आप पर बहुत विश्वास है जब यह बच्चा गर्भ में आठ महीने का था तो मुझे कष्ट था। मैंने आपके फोटो के आगे प्रार्थना की, कि बच्चा पैदा हो जाये ताकि मैं इस कष्ट से बच जाऊं। बच्चा आठवें महीने में पैदा हो गया। फिर जब यह दो तीन महीने का था तो सखत बीमार हो गया, डाक्टर ने जबाब दे दिया। मैंने इसको अपनी गोद में डाल लिया और आपका फोटो हाथ में ले लिया और प्रार्थना करने लग गई। बच्चे के प्राण निकल गये। रात का समय था। घर में लोग एकत्र थे। वह मुझसे लाश को छीन रहे थे। बच्चा तो मर गया, अब तेरा गुरु क्या करेगा ? मैंने बच्चा उनको नहीं दिया और कहा कि मेरा गुरु सब कुछ है। मैं सारी रात आपसे प्रार्थना करती रही कि गुरु महाराज ? आपने ही दिया था। अब आप ही मेरी लाज रखो। फिर मैंने यह भी कहा कि यदि मेरा बच्चा मर गया तो मैं तेरे दरवार में आकर तेरे सामने अपने प्राण त्याग दूंगी। आपने दया की और प्रातः होने से पहले ही इस बच्चे में जान आ गई और यह रोया। सब लोग चकित हो

गये लेकिन मेरे लिए यह हैरानी नहीं थी। क्योंकि मैं जानती हूं कि आप सब कुछ कर सकते हैं और मेरे बच्चे को भी जीवित कर देंगे।

ऐ संसार वालो ! यह स्त्री आपके सामने बैठी है। जिसके साथ वह घटना घटी। मैं सच कहता हूं कि मैं इस स्त्री को नहीं जानता कि यह कौन है और कहाँ की रहने वाली है और न ही मुझे यह याद है कि यह पहले भी यहां आई थी और न ही मुझे यह पता है कि यह कब प्रसाद ले गई थी। इसका लड़का बीमार हुआ, मर गया, दोबारा जीवित हुआ या यह मेरे फोटो के आगे प्रार्थना करती रही। मुझे कुछ पता नहीं। तो फिर क्या सिद्ध हुआ ? कि यह सब मानव के अपने ही विश्वास, अपनी हो आस और अपने ही कर्म का फल है। जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी गति वैसी मति, जैसी आशा वैसी वासा. ऐसी बातों से मेरी तो आँख खुल गई। संसार में मुझे न खुशी रही और न गमी रही और न किसी वस्तु से लगाव रहा। अब एक प्रकार से तो मैं तर गया और क्योंकि संसार में किसी वस्तु से लगाव नहीं रहा। इसलिए

संसार की और से अर्थात संसारिक जीवन की ओर से मेरा वेड़ा डूव गया ।

बातों के फेर पड़े ज्ञानी अभिमानी मानी गुमानी वने।
वह ज्ञान नहीं अज्ञान नहीं वन्द न खुला झरोका है।

लोग वेदों शास्त्रों और उपनिष्दों का हेवाला देकर भाषण देते हैं। यह सब बात का बतंगड़ है। जो रहस्य को समझ गया वह चुप हो गया। जो कुछ भी हम करते हैं यह सब हमारे अपने ही मन का मान है, और उसी में हम फंसे हुये हैं। कोई कहता है कि मुझ में सिद्धि शक्ति है कोई कहता है कि मैं दूसरों की सुरत चढ़ा सकता हूं। कोई अपने आपको ज्ञानी कहता है और कोई कुछ बनता है।

जा कुछ दिन कर संगत गुरु की, तब सार तत्व को जानेगा।

वह न बन्धन में है और न ही मुक्त है। इस लिए वह कहते हैं कि गुरु की संगत में जाओ और असलियत को और सार तत्व को समझो। मैं अपने आपसे पूछता हूं कि तुमने गुरु की संगत की ! तुमको सार तत्व की क्या समझ आई ? मुझे जो समझ आई वह मैं वर्णन नहीं कर सकता। सार तत्व के बारे मुझे जो अनुभव हुआ वह वर्णन से बाहिर है। उसको

वर्णन करने के लिए यदि मैं कोई शब्द प्रयोग करूंगा तो वह मेरा अभिमान बन जायेगा। वह क्या है? गूंगे का गुड़। उसको कोई बर्णन नहीं कर सकता। लेकिन फिर भी वह क्या है? It is, what it is, वह एक चेतन तत्व है। Element हैं। वह खेलता है। उसमें कहीं चान्द, कहीं सूर्य, कहीं लोक लोकान्तर, कहीं ब्रह्म और कहीं सतलोक आदि बन जाते हैं। उसीसे बनते हैं और समय आने पर उसी में समा जाते हैं। जीवन क्या है:

लब खुले और बन्द हुये, यह राज़ जिन्दगानी है।

वह बेअन्त है। किसी ने आज तक उसको जाना नहीं। जो हो रहा है, हो रहा है। किसी के बस में नहीं है। हम लाख उपाय करते हैं, मगर जो होना होता है वह होके रहता है। तो इस ज्ञान से मुझे क्या मिला? शान्ति? इसको मैं शान्ति भी नहीं कहता। वह है गूंगे का गुड़। राम को मिलने का जो जनून था। वह इतना फैला कि कहने सुनने की बात नहीं। मैं अब सत्संग करवाने के योग्य नहीं रहा। मगर आप लोग गृहस्थी हैं। आप लोग इस मंज़ल तक नहीं पहुंच सकते।

भवसागर अगम अथाह से पार, करा दिया सतगुरु दाता ने।
मुझ दीन अधीन को ठौर ठिकाने, लगा दिया सतगुरु दाता ने।।

भव क्या है ? हमारे मनके विचार। मेरी बुद्धि जो हर समय सोचा करती थी कि यह क्या है और वह क्या है और हर समय मेरे मस्तिष्क में जो अनेक प्रकार के विचार चक्कर लगाया करते थे, वह समाप्त हो गये। यह है गुरु की दया। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे कैसे पार करा दिया ? मेरे जीवन को अनुभव से गुजार कर मुझे अनुभव करा दिया। लोग मुझे गुरु मानते हैं। उनके अनुभवों ने मेरी आँख खोल दी। श्री गोपी लाल कृषक ने अभ्यास किया। देखो ! एक बात तुमको कहता हूं। तुम्हें जो कुछ मिलता है वह तुम्हारे ही कर्म, तुम्हारे ही बिश्वास और तुम्हारी ही श्रद्धा का फल मिलता है। कुछ वर्ष हुये, श्री गोपी लाल कृषक ने मुझे पत्र लिखा कि मैं परमार्थ का जिज्ञासु हूं। मैंने एक साधु से नाम लिया था। दस हज़ार रुपये खर्च करके उसकी कुटिया बनवाई। और भी बहुत खर्च किया मगर मेरा काम नहीं बना। मैंने उसको उत्तर दिया कि मैं किसी को नाम नहीं देता। हज़ूर दाता दयाल

जो महाराज ने मुझे राधास्वामी नाम और गुरुस्वरूप का ध्यान बताया था । तुम जहाँ से इच्छा हो नाम लेलो । मगर मेरी किताबें पढ़ते रहना ताकि तुम पथभ्रष्ट न हो जाओ । उसने मेरे पत्र को ही नामदान समझ लिया और अभ्यास करने लग गया । कई बार मुझे पत्र लिखता कि इसे यह दृश्य अन्तर प्रगट हुआ, इनका क्या अभिप्राय है ? मैं उसको उत्तर देता । जब उसके अन्तर बीन बजने लगी तो वह यहाँ होशियारपुर में मेरे पास दुशहरे के सत्संग में आया और नौ सेब लाया । उसने एक डायरी रखी हुई थी जिसको वह प्रतिदिन अभ्यास के बाद लिखा करता था । मैंने जब उसकी डायरी पढ़ी तो मेरे पांव के नीचे से मिट्टी निकल गई । उस में लिखा हुआ था कि आज आपके रूप नें मुझे यह कहा और आज यह कहा । मुझे तो यह भी पता नही था कि वह मेरा ध्यान करता है । मैंने पाँच पैसे और एक नारयल उसकी गोद में डालकर उसको मथ्था टेका और कहा कि तुम नामदान दिया करो और सत्संग कराया करो । इससे आगे तुमको स्वयं पता लग जायेगा । अब मैंनें तो उसको कुछ दिया नहीं ।

हाँ ! उसने किताबों से मेरे बिचार लिये। इसलिए आप कह सकते हैं कि उसने सब कुछ मुझ से लिया मगर मैंने उसे कुछ नहीं दिया। इसी वास्ते कहा जाता है कि नाम दिया नहीं जाता, नाम लिया जाता है। इसीलिए मैं किसी को नाम नहीं देता और न ही चेले बनाये। अब उसने एक किताब "सन्तमत लेखमाला" लिखी है। जिसको पढ़कर मैं चकित होता हूं।

तुम लोग आते हो। मेरा सत्संग कराने का कोई ध्येय है। दूसरों का शब्द तेरे बनाने का होगा। लेकिन मेरा उद्देश्य यह है कि आदमी का जीवन बन जाये और सुख शान्ति से बीत जाये। कैसे बीतेगा ? तुम्हारे ही विचार और तुम्हारे ही कर्म से बीतेगा। यह विचार कि तुमने जीवन को किस प्रकार से व्यतीत करना है। यह बाहर का गुरु बताता है। इसलिए राधास्वामी मत में जीवित गुरु की महिमा है। मुरदा गुरु की बाणी से तुम कुछ लाभ उठा सकते हो, मगर बेड़ा पार नहीं होगा। क्यों ? किताबों में तो सब कुछ लिखा हुआ है लेकिन प्रकृति सबकी जुदा २ है और प्रकृति के अनुसार जीब

को शिक्षा दी जाती है। क्या किताबें तुम्हारी प्रकृति को समझ लेगी? डाक्टरी की किताबों में हर एक बीमारी का इलाज लिखा हुआ है लेकिन बीमारी की पहचान डाक्टर ही करेगा, डाक्टर की किताब तो नहीं करेगी। इसलिए सन्तमत में जीवित गुरु की बड़ाई है। मैं जानता हूं कि मैं मन्दिर की जड़ों में कुलहाड़ी चला रहा हूं। मेरे स्पष्ट बर्णन के कारण मुझे कोई पैसा नहीं देगा लेकिन में किसी को धोखा नहीं देना चाहता। यदि परदा रखता और में भी चुप हो जाता तो लोग मुझे भी रुपये देते। अब कोई विशेष २ व्यक्ति जिनकी कुछ समझ आ गई है केबल वह देते हैं। मगर मैं यह परवाह नहीं करता। मैं तो अपना कर्तव्य पूरा कर रहा हूं। मुझे हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी, निबल अबल अज्ञानी जीवों की सहायता करता। तो मैं यह सहायता ही तो कर रहा हूं कि तुमको जो कुछ मिलेगा वह तुम्हारे ही कर्म और तुम्हारी नीयत का फल मिलेगा। इस वास्ते में कहा करता हूं कि अपनी नीयत भी साफ रखो और आशावादी रहो। सदैव यह सोचो कि मालिक जो करेगा वह अच्छा करेगा।

यदि अच्छा सोचोगे तो अच्छा ही होगा और यदि बुरा सोचोगे तो बुरा होगा। जैसा बिचार होगा वैसा ही परिणाम होगा।

भवसागर अगम अथाह से पार करा दिया सत्गुरु दाता ने।

कैसे करा दिया ? मन का समुंदर बहुत बड़ा है। संसार में जीने का भेद बता कर इस मन के समुंदर से पार करा दिया। इसलिए जब तक जीवन है। आशावादी रहो। तुम्हारे ही विचार का फल तुमको मिलेगे। यह जो राजस्थान की महिला आई हुई है। जो कहती है कि आपने मेरे बच्चे को जीवित कर दिया, क्या मैंने कुछ किया ? इसके अपने ही विचार ने किया। तभी तो मैं कहा करता हूं कि अपने विचार को ठीक रखो। विचार का फल सब को मिलता है। क्योंकि विचार कमजोर होता है, इसलिए सहारा लेना पड़ता है। कोई राम का सहारा लेता है, कोई कृष्ण का सहारा लेता है, कोई कोई देवी या देवता का सहारा लेता है, कोई गुरु का सहारा लेता है और कोई किसी का सहारा लेता है।

मुझ दीन अधीन को ठौर ठिकाने लगा दिया सतगुरु दाता ने।

मैं दीन अधीन था। हजूर दाता दयाल जी

महाराज के दरवार में जाके रोया करता था। जब वहाँ जाता तो रोता, और जब वापिस आता तो रोता। एक बार मैं लाहौर उनके दरवार में गया और पांच छः दिन रहा। जब वापिस आने लगा तो रोते-रोते हज़ूर को मथ्था टेका और चल दिया। थोड़ी दूर ही गया था तो मैं उनका रूप भूल गया। फिर रोता हुआ बापिस उनके पास चला गया। उन्होंने कहा कि वापिस क्यों आ गये हो ? मैंने प्रार्थना की, कि हज़ूर ! आपका रूप भूल गया हूं। इसलिए फिर दर्शन करने आया हूं। कहा कि दर्शन कर लिये ? जी हाँ कर लिये। आज्ञा दी की अच्छा अब जाओ। मैं फिर रोता हुआ चल पड़ा। थोड़ी दूर जाकर फिर वापिस आ गया। बल्कि चार पाँच बार गया और वापिस आया। अन्त में हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने अपने मैनेजर साहिब से कहा कि एक टांगा मंगवाओ। टांगा आ गया। आज्ञा दी कि फकीर को टाँगे में बैठा कर उसकी पगड़ी के साथ इसको टांगे से बांध दो और स्टेशन पर इसके साथ जाकर इसको टिकट लेकर गाड़ी में बैठा दो और जब तक गाड़ी स्टेशन से

चली न जाये तुम वापिस मत आना और मेरे साथ उन्होंने ऐसा ही किया। यह मैं अपनी दशा आपको बता रहा हूं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने कहा कि फकीर! तुमको क्या हो गया। चुनमनु (हजूर की बेटी) जब ससुराल जाती है तो भी इतना नहीं रोती जितना कि तुम रोते हो।

उस समय मुझे पता नहीं था। अब पता लगा कि मैं क्यों रोता था। जिनके ब्रह्मचर्य गिरे हुये होते हैं। जिनका जीवन विषय विकार में जीता हो, वह रोते हैं। छोटी आयु में मेरा विवाह हो गया। १५-१६ साल की आयु में गृहस्थ में फंस गया। फिर रोना तो मेरे भाग्य में आता ही था। बसरे, बगदाद में स्वभाविक ही अन्तर से निकले हुए भजन गाया करता था और रोया करता था। पण्डित परशोतम दास जी ने हजूर दाता दयाल जी महाराज को लाहौर में पत्र लिखा कि फकीर चन्द जी प्रेम में बहुत रोते हैं। हमें भी ऐसा प्रेम प्रदान किया जाये। उत्तर मिला कि जिनके भाग्य में रोना है वह रोयें। तुम क्यों ऐसी इच्छा करते हो।

इसलिए मैंने शिक्षा को बदल दिया। जितना

अधिक विषय कमाओगे उतने ही अधिक निर्बल हो जाओगे। तुम माताए हो। तुम अपने घरों में देखती हो कि एक बच्चा जितना अधिक निर्बल होगा वह उतना ही अधिक रोयेगा। घर वाले भी उससे तंग आ जाते हैं और जो बच्चा स्वस्थ होता है। वह हर समय प्रसन्न रहता है और सब उससे प्यार करते हैं। इसलिए मैंने शिक्षा को बदल दिया कि ऐ मानव ! आवश्यकता से अधिक विषय मत कमा अन्यथा तेरे भाग्य में रोना आयेगा। में दीन और अधीन क्यों था ? विषय बिकार का मारा हुआ था मगर दाता दयाल जी महाराज मुझे उत्साह दिया करते थे। उन्होंने मेरी भावनायों को कुचला नहीं। इसलिए किसी को यह मत कहो कि तुम पापी हो या नालायक हो। किसी को कमजोर बिचार मत दो। यह संतमत की शिक्षा है :

संसार महा दुखदाई था नहीं अपना कोई सहाई था।
जिस दया से मेरा काम, बना दिया सत्गुरु दाता ने ॥

इस संसार में कोई सुखी नहीं है। कोई स्त्री से दुखी है, कोई पती से दुखी है, किसी के सन्तान नहीं है तो दुखी है, कोई अपनी संतान से दुखी है कोई

किसी योग के कारण दुखी है। दुख और विपत्ति के समय ज्ञान ध्यान भी भूल जाता है। मेरा काम क्या विगड़ा हुआ था ? मेरा मन भरम और विकार में था और इस कारण मुझे अशान्ति थी । अब हजूर दाता दयाल जी महाराज की दया से यह सब समाप्त हो गये। मैं गुरु नहीं हूं। हाँ तुम लोग मुझे गुरु मानते हो तो तुम्हारे मानने के कारण और तुम्हारे अपने ही विश्वाश और श्रद्धा के कारण तुम्हारे काम होते हैं। क्या मूर्ति कुछ करती है ? लोग मेंरा ध्यान करते हैं। मुझे तो पता भी नहीं होता और न ही मैं इन सब लोगों को जानता हूं। मगर उनकी मनोकामनायें पूरी हो जाती हैं और लोगों के मुझे प्रतिदिन पत्र आते हैं । क्या मैं कुछ करता हूं ? नहीं। यह सब तुम्हारा अपना ही विश्वास है । यह आदमी छः गुरुयों के पास से होकर आया है। कभी कहीं जाता है कभी कहीं जाता है। क्यों ? विश्वास नहीं है। व्यभचारी बनने की आवश्यकता नहीं है। सत्संग कहीं भी सुनो मगर अपना इष्ठ मत बढ़ाओ। संसार वालों को समझ नहीं है। इष्ट भी तो तुम्हारा अपना

ही मन है। वह बाहर का नहीं है और न ही बाहर से आता हैं

एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाये।

कोई सच्ची बात नहीं बताता। सब ने परदा रखा लेकिन मैंने इस पुरानी रीति को तोड़ दिया।

मन चंचल था अज्ञानी था, अभिमानी मानी गुमानी था।
सुरत शब्द योग विधि से निश्चल, करवा दिया सतगुर दाता ने।

सुरत शब्द योग से मेरे मन की चंचलता, अज्ञान, अभिमान और गुमान सब दूर हो गये। मन से तुम जो भी जप-तप और कर्म-धर्म करोगे। इससे तुम्हारे संसार के काम बनते रहेंगे। सिद्धि शक्ति भी आ जायेगी। मगर तुम मन के चक्कर से अर्थात आवागवन से नहीं बच सकोगे। एक बात याद रखो कि मन शकलें बनाता है लेकिन सुरत शक्ल नहीं वनाती। इसलिए सन्त कहते हैं कि दसवें द्वार से आगे गुरु है। यही हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज कहा करते थे। लेकिन लोग यह समझते रहे कि दसवें द्वार से आगे हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज मिलेंगे। जब तक तुम सुमिरन और ध्यान

करते हो तुम मन में हो। जब तक मन निर्मल नहीं होता तुम आगे नहीं जा सकते। इसलिए मन को साधने के लिए बाहर की सेवा पूजा परोपकार और दुखियों की सेवा बताई जाती है ताकि तुम्हारा मन निर्मल हो जाये। जिसका मन निर्मल नहीं है वह प्रकाश और शब्द को नहीं पकड़ सकता। इसलिए सन्तों ने इस शिक्षा को छुपा के रखा। इसके लिए पहले ईश्केमजाज़ी करना पड़ता है। मजाज़ के अर्थ हैं जुज़ (भाग) प्रक्रित के किसी भाग से प्रेम करना पड़ता है। किसी स्त्री से इश्क पैदा करना ही इश्केमजाज़ो नहीं है। मातृ भक्ति, पितृ भक्ति, देश भक्ति, पति की सेवा, बच्चों से प्रेम करना और प्रकृति के नजारों से प्रेम करना यह सब इश्केमजाज़ी हैं। जब तक किसी को बाहर में प्रेम करने की आदत नहीं है वह अन्तर में प्रेम नहीं कर सकता। इसलिए आरम्भ में बाहर की सेवा पूजा और गुरुस्बरूप से प्रेम करने की आज्ञा दी जाती है। प्रारम्भिक श्रेणियों को पार करने के बाद शब्दयोग की शिक्षा दी जाती है। शब्दयोग करने से आदमी मन के चक्कर से निकल सकता है।

घट अघठ का भेद दिया मुझको, चरणों में अपने लिया
मुझको ।
सतसंग के अमृत बचन सुना, के चिता दिया सतगुरु,
दाता ने ।

गुरु क्या करता है ? भेद और सार बताता है ।

बिन सतसंग विवेक न होई. राम कृपा बिन सुलभ न सोई ।

कीर्तन करना और अच्छी किताबें पढ़ना भी सत्संग है । मगर भेद और रहस्य कोई सत्पुरुष ही बतला सकता है । हर एक आदमी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए प्रकृति कोई न कोई सामान पैदा कर देती है । तुम्हारी ही बासना के अनुसार तुम्हें कोई सतपुरुष मिलता है । सत्संग में गुरु के बचनों को सुनकर और फिर उन पर विचार करके आदमी को जब समझ आ जाती है तब बेड़ा पार होता है । जब तक विश्वास न हो सफलता प्राप्त नहीं होती । इसलिए पिछले समय में जब तक विश्वास को Test नहीं कर लिया जाता था उसको नाम नहीं दिया जाता था । मुझे खेद हैं कि मेरा सत्संग ऊंचा है, यह मेरे बस की बात नहीं । मुझसे अब 'क' 'ख' 'ग' नहीं पढ़ाया जाता जैसे बी-ऐ और

एम-ए को पढ़ाने वाला प्रोफैसेर छोटी कक्षाओं के बच्चों को नहीं पढ़ा सकता और वह अपने बच्चों को भी जो कि छोटी कक्षाओं में पढ़ते हैं स्वयं नहीं पढ़ा सकता, उनको Tuition रख देता है। हर एक आदमी का जुदा-जुदा काम है । मैं ऊंचा चला गया ।

मैं अब चरणो की दासी, सुख पाकर हो गई सुख सारी।

मैं गुरु के चरणों की दासी बनी तब मैंने सुख पाया। एक तो बाहर के गुरु के चरण हैं और दूसरे तुम्हारे अन्तर में गुरु के चरण हैं प्रकाश। जब तक बाहर के गुरु के पास श्रद्धा, प्रेम और दीनता के साथ नहीं जाओगे, तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा और जब तक बाहर के सत्संग से तुम्हारा मन निर्मल नहीं हो जायेगा, तुम अन्तर के चरणों को पकड़ नहीं सकोगे अर्थात प्रकाश में नहीं जा सकोगे।

राधास्वामी धाम का देके पता, पहुंचा दिया सतगुरु दाता ने।

राधास्वामी धाम क्या है? राधास्वामी धाम वह अवस्था है जहाँ मन का खेल समाप्त हो जाता है। और हम सुरत से शब्द को सुनते हैं। उसके बाद एक अनुभव होता है वह एक विशेष अवस्था होती है। जैसे माड़ू राग की धुन जब बजती है तो

सिपाही उसको सुनते ही जोश में आ जाते हैं। उस धुनका प्रभाव ही ऐसा होता है कि अपने आप जोश आता है। ऐसे ही सारशब्द को सुनने से मस्तिष्क के अन्तर एक दशा पैदा हो जाती है और उसका नाम अनुभव है :

सुरत शब्द दोऊ अनुभव रूपा, तू तो पड़ा भरम के कूपा ॥

हर एक धुन अपना प्रभाव रखती है और उसको सुनने से उसके अनुसार अवस्था पैदा होती है। जब कोई बड़ा आदमी मर जाता है तो रेडियो पर साधारण तौर पर मातमी धुन बजाई जाती है। उसको सुनने से वही अवस्था पैदा हो जाती है। शरीर में भिन्न २ दरजे हैं और हरएक दरजे की धुन भी अलग है। शरीर में रक्त दौरा करता है। डाक्टर टूटी लगाकर उसकी आवाज़ को सुनते हैं और बीमारी का पता लगा लेते हैं। शब्द ही शब्द की जान है। ज़हाँ गति होती है वहाँ शब्द पैदा होता है। हमारा शरीर पूरे ब्रह्माण्ड का नमूना है। और इसमें हर एक स्थान का शब्द जुदा २ है। घण्टा संख सुनने से संसारिक जीवन अच्छा हो जाता है। ओम् की धुन सुनने से बुद्धि की उन्नति होती

है [illegible] लने के लिए रारंग सारंग है। आत्म ज्ञान के लिए मुरली है और आत्मा की खुशी के लिए बीन है। सदा के लिए उस मालिक में मिल जाने के लिए सार शब्द या राधास्वामी नाम है। आप लोग आ जाते हैं। मैं अपनी जिम्मेदारी समझता हूं और अपना कर्तव्य पूरा कर जाना चाहता हूं कि तुम्हारे ही विश्वास, श्रद्धा, कर्म और अमल का फल तुम्हें मिलेगा। किसी इच्छा को लेकर सत्संग में जाओ। किसी उद्देश्य के लिए जाओ। हजूर दाता दयाल जी महाराज कहा करते थे।

1. Eat to the purpose. 2. Walk to the purpose and 3. Talk to the purpose,

जो आदमी बिना उद्देश्य के चलता है। वह अवारागरदी में पकड़ा जाता है। इसलिए किसी उद्देश्य को लेकर सत्संग में जाओ ताकि तुम्हारा उद्देश्य पूरा हो।

सब को राधास्वामी।

मानवता मन्दिर

लेखक :—

सेठ दुर्गा दास साहिब, चण्डीगढ़।

एक सज्जन ने मुझ से प्रश्न किया कि इस मन्दिर का नाम मानवता मन्दिर क्यों रखा हुआ है ? इनका प्रश्न बहुत उचित है। क्योंकि किसी ने आज तक संसार में किसी स्थान का ऐसा नाम न सुना, पढ़ा और न देखा। मैंने उत्तर में प्रार्थना की, कि मानवता मन्दिर में परम दयाल जी महाराज सत्सगियों को अपने सत्संग में मनुष्य बनो का आदेश करते हैं। महाराज जी मानवता पर बहुत बल देते हैं और फरमाते हैं कि अध्यात्मिकता से मानवता अच्छी है।

फरिशता से वहतर है इन्सान वनना, मगर इसमें लगती है
महनत ज्यादा।

परमार्थिक जीव अपना ही उधार कर सकता है। अध्यात्मिकता तो व्यक्तिगत वस्तु है। इसलिए

कहा है कि ऐ इन्सान ! तू फरिश्ता और देवता न बन ! मानव बनने का यत्न कर ! लेकिन मानव बनने में मानव को बहुत परिश्रम करना पड़ता है, बहुत यत्न करना पड़ता है। कष्ट सहन करना पड़ेगा लेकिन यदि मानव मानवता का पाठ सीख ले तो मानव बन जाये और मानवता के काम करे, तो संसार एक सुन्दर स्वर्ग लोक बन जायेगा। बहुत लुभायमान प्रतीत होगा। एक ऐसा वातावरण इस संसार का हो जायेगा कि इसका विचार ही आनन्द देता है।

एक आश्चर्य की बात हे। जब कि संसार भर में जगह जगह सत्संग होते हैं। प्रातः सायं सब लोग सत्संग सुनते हैं। उपदेश दिये जाते हैं। सैकड़ों गुरुदवारे, हजारों मन्दिर, लाखों मसजिदें और गिरजाघर इस संसार में मौजूद हैं। इन पर सैकड़ों की सम्पति खर्च हो रही है। बेशुमार लोग मन्दिरों, मसजिदों गुरुदुवारों और गिरजाघरों में जाते है। प्रातः सायं प्रचार होता है। संसार का हर धर्म मानव को प्रेरना करता है कि गुनाहों से बचो। बुरे कर्म मत करो। नेकी और भलाई के काम करने

चाहियें। लेकिन दुख इस बात का [illegible] का सदाचार दिन प्रतिदिन गिर रहा है। जो पंचास साल पहले था वह अब नहीं है। जो अब है पचास साल बाद देखने में न आयेगा। दिन प्रतिदिन गुनाहों में ज्यादती होती है व्यविचार बढ़ रहा हैं। चोरी, डाका, सीनाज़ोरी, झूठ बलातकारी धोखेदेही रिश्वतखोरी· लूट-घसूट और बेईमानी ज़ोरों पर है। सब प्रकार के गुनाहों की संसार के हर कोने में भरमार है। बुराईयां बढ़ रही हैं। शराब और मांस के प्रयोग को कई धर्म वाले पाप नहीं समझ रहे हैं। अन्य सब बुराईयां इनके साथ रहती हैं। नेकी और अच्छाई कम हो रही है।

यह एक आश्चर्य की बात है। ध्यान से सुनों। क्यों ?

क्यों ऐसा हो रहा है ? इसका कारण है। हर एक धर्म खुदा और ईश्वर की पूजा पर बल देता है। ऐसे उपदेश बहुत कम प्रभाव डालते हैं। बहुत थोड़े मानव हैं जो इस ओर ध्यान देते हैं। क्योंकि ईश्वर की भक्ति तो वह व्यक्ति कर सकता है जिसको

संसार से वैराग्य हो चुका हो। संसार के त्याग का मज़ा ले चुका हो। यह संसार उसको दुखदाई प्रतीत होता है। यहां उसको कोई सुख नहीं मिलता। यूं कहने को तो ईश्वर को पूजने वाले हैं, लेकिन, उन के जीवन का अवलोकन करो तो पता चलेगा कि ईश्वर भक्ति इनके समीप भी नहीं आई। किसी को ईश्वर का डर नहीं रहा। सब कहते हैं ईश्वर सर्वव्यापक है। हर एक जगह हर वस्तु में है। लेकिन बुरा कर्म करने से नहीं डरते। बुरे कर्म के दण्ड से वेपरवाह हैं। इनका आज के जीवन से मतलब है। कल का पता नहीं। अफसोस इस दुनियां में इन्सान न रहा।

कोई हिन्दू और मुसलमान हो गया।

फिर सज्जन ने मुझसे प्रश्न किया कि आप एक मासिक रसाला 'मनुष्य बनों' के नाम से भी निकालते हैं। क्या हम मानव नहीं हैं ?

मैंने उत्तर दिया कि निस्संदेह हम शकलोसूरत से मानव हैं। लेकिन हर एक मानव अपने निजी कर्मों को देखेगा तो पता पायेगा कि उसने अपने

जीवन मे कोई मानवता का काम नहीं किया। भला मानव और पशु में क्या अन्तर है ? पेट की अग्नि दोनों बुझाते हैं । दोनों इस संसार में जीवन व्यतीत करते हैं । काम क्रोध मोह और अहंकार दोनों में हैं दोनों को जीवित रहने की इच्छा है । दोनों भय खाते हैं और मौत से डरते हैं ।

हाँ ! जानवर और मानव में अन्तर है। वह है हक और अधिकार का। मनुष्य को पता है कि सामान, मकान जमीन धन सम्पत्ति और स्त्री उसकी है। हैवान उसे नहीं जानता है वह अपनी और पराई वस्तु में अन्तर नहीं समझता । किसी का चारा घास पड़ा हो वह उसको खाने लग जायेगा। लेकिन मानव ऐसे नहीं करेगा ।

दूसरे मानव गुनाहगार है, गुनाह करता है और उसका फल भोगता है । लेकिन हैवान ने कभी गुनाह नहीं किया ।

तीसरे मानव भलाई कर सकता है लेकिन हैवान किसी की सहायता नहीं कर सकना ।

इस संसार का उद्धार इस बात में है कि मानव

सुनिईये

मानव मंदिर के पढ़ने वालो या मेरे साहित्य के पढ़ने वालो ! आप लोगों को कुछ कहना चाहता हूं। यद्यपि यह जानता हूं कि यह कहना भी मेरे बस में नहीं, यह या तो मेरे कर्म हैं या उस मालिक की इच्छा है।

हजूर दाता दयाल महर्षि जी महाराज की आज्ञानुसार कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। मैंने जो कुछ भी कहा वह अपने जीवन में निजी अनुभव और साक्षातकार के आधार पर अपनी सादा ज़बान और सरल शब्दों में बताया। पिछले महीने मानव मंदिर क़िताब के २४० पृष्ठ थे। लग भग चार हज़ार (४०००) रुपये का खर्च आया। इसके पड़ने वाले हज़ारों आदमी हैं। मैंने क़िसी किताब का मूल्य जो मानवता मंदिर से छपती है, नहीं रखा। इसका कारण मैं पहले बता

चुका हूं कि ब्राह्मण होने के कारण मैं ५८ ोत ज्ञान और समझ जो मुझको मिली उसको बेचता नहीं। इसलिए क्योंकि खर्च दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं और मेरी सचाई और स्पष्ट वर्णन जिसमें किसी को अंधेरे में नहीं रखा जाता, के कारण बहुत कम आदमी मंदिर की सहायता करते हैं। इसलिए मेरी हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि जिनको मेरी किताबों से कुछ लाभ पहुंचा हो, मन को शांति मिलती हो और जीवन व्यतीत करने का ठीक मार्ग मिलता हो वह लोग किताब मंगवायें ताकि मंदिर पर अनावश्यक खर्च न पड़े और जो लोग समझते हैं कि मेरे इन विचारों से किसीको लाभ पहुंचता है, वह मंदिर में दान की शकल में अवश्य सहायता करें।

हजूर दाता दयाल जी महाराज ने कहा था कि शिक्षा को बदल जाना। आज हिन्दसमाचार पत्र में स्वामी विवेकानन्द जी की पिछली आयु के हालात लिखे थे। उनको पढ़कर मैं चकित होगया कि उनको भी दमा की बीमारी और मूत्र रोग के कारण बहुत कष्ट हुया। सोचता हूं कि वह बाल ब्रह्मचारी थे। आयु भी बड़ी नहीं थी। फिर उनको यह कष्ट क्यों

...र सन्तों की दशा भी देखो उनको भी कई प्रकार के शारीरिक कष्ट हुए। यह कष्ट जो हमको मिलते हैं या तो यह हमारे इस जन्म के कर्मों का फल है और या हमारे प्रालब्द कर्मों का फल है। जब भक्त, सन्त और साधुओं की यह दशा देखता हूं तो सोचता हूं कि आदमी क्या करे। स्वामी रामकृष्ण परमहंस की क्या दशा हुई। मेरे साथ क्या बीते या क्या गुज़रे मुझे क्या पता? इस समय तो मैं लग-भग 89 साल का हो गया हूं और चलता फिरता हूं। क्योंकि दाता दयाल जी महाराज ने कहा था कि शिक्षा को बदल जाना। क्या बदलूं? ऐ मानव! अपने कर्म को ठीक कर। कर्म का जड़ मानव की बासना में है और बासना का सम्बन्ध हमारी नीयत से है। मैंने इस वासते गुरु बनने से पूर्व और बाद में भी अपनी नीयत को साफ रखा है। अपने निजी स्वार्थ के लिए कोई काम नहीं किया। मैंने जीवन में जो कुछ किया इसमें हेरा फेरी, धोखा फरेब या लोगों को गलत तरीके से अपने पीछे लगाना या सब्ज बाग दिखाना, मैंने यह काम नहीं किया।

मेरे साहित्य को पढ़ने वालो !

कि तुम मेरे कहे पर चलो। मेरे सिर पर एक गुरु ऋण था कि शिक्षा को बदल जाना। मैंने अपना काम किया और जबतक हस्ती है, करता रहूंगा। यह आप लोगों का काम है कि अपनी बुद्धि से सोचो कि जो कुछ मैंने कहा है, वह ठींक है या ग़लत है।

यह अपील भी मैं न करता। लेकिन इस संसार में बिना आपसी सहायता के जीवन के किसी भी क्षेत्र में कोई काम नहीं हो सकता। क्योंकि हम एक दूसरे के सहारे हैं।

आप का फकीर।

—❈—

फकीर ला... 3265/74
होशि... ...ANDIR

P—Hsp—7.

ADDRESS
1283

To Sh. A. Hanwanth Rao
H.NO. 10-3-194/8 H...
Nagar Hyderab...
28. (A.P.)

...R

From:
MAN...
SUTF...

मान

मन्दिर